ओ३म्

जिन्होंने मृत्यु को जीत लिया

परिवार और समाज के नवनिर्माण का मासिक

शांतिधर्मी

अक्तूबर–नवम्बर, 2014

हिन्दू सम्राट हेमचन्द्र विक्रमादित्य

भारत रत्न के हकदार
हॉकी के जादूगर

शारदीय नवसस्येष्टि पर्व पर शुभकामनाएं

₹20

ओ३म्

भारत के यशस्वी प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र भाई मोदी के चमत्कारिक नेतृत्व में

हरियाणा में नई सरकार के गठन पर

हार्दिक बधाई

समस्त देशवासियों को दीपावली की हार्दिक शुभकामनाएं

तेजस्वी नेतृत्व, युवा हृदय सम्राट

कै. अभिमन्यु

केबिनेट मंत्री हरियाणा सरकार

वेद प्रकाश बेनिवाल

विशिष्ट समाजसेवी

भावना एसोसिएयेट्स

कौशिक नगर, मुख्य डाक घर मार्ग,

जीन्द-126102 (हरि.) मो. 8053707000

दीपावली पर्व पर हार्दिक शुभकामनाएं

Ph. 252157 (F)

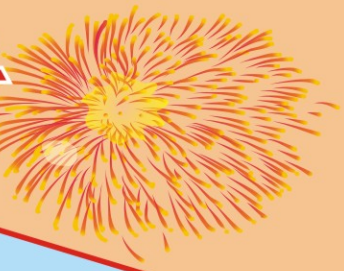

भारत सर्जीकिल इंडस्ट्रीज

Manufacturers of :

ABSORBENT COTTON WOOL I.P., NON-ABSORBENT COTTON, ZIG ZAG COTTON, COTTON ROLLS

कार्यशाला :

रोहतक रोड़, नजदीक बाईपास, जीन्द-126102 (हरियाणा)

BHARAT COATINGS

2430, M.I.E. Near M.I.E. Police Post
Bahadurgarh (Haryana)

Narender Gupta

Affiliation No. 530892

School Code : 20494

SUPREME

Senior Secondary School

(Affiliated to CBSE, New Delhi)

2ND RANK OVERALL IN CBSE SCHOOLS IN JIND

SPECIAL COACHING FOR INDOOR & OUTDOOR GAMES

SPECIAL REMEDIAL CLASSES FOR SCIENCE GROUP

LEARNING BY DOING

PLAYWAY METHOD OF LEARNING

SPECIAL ATTENTION ON SPOKEN ENGLISH

NUR. TO 10+2

Safidon Road, Jind.

Contact No. 01681-245027, 248424

Visit us at: www.supremesrsec.com

ओ३म्

शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा।

परिवार और समाज के नवनिर्माण का मासिक

शान्तिधर्मी

अक्तूबर-नवम्बर २०१४

वर्ष : १६ अंक : ६-१० आश्विन–कार्तिक २०७१
स ष्टि संवत्-१६६०८५३११५, दयानन्दाब्द : १६२

सम्पादक : चन्द्रभानु आर्य
(चलभाष ०८०५६६-६४३४०)
संयुक्त सम्पादक : सहदेव समर्पित
(चलभाष ०६४१६२-५३८२६)
उपसम्पादक : सत्यसुधा शास्त्री
प्रबंध संपादक : सुभाष श्योराण
आदरी सम्पादक : यज्ञदत्त आर्य
सह-सम्पादक : राजेशार्य आट्टा
डॉ० विवेक आर्य
नरेश सिहाग बोहल
सहयोग : आचार्य आनन्द पुरुषार्थी
श्रीपाल आर्य, बागपत
महेश सोनी, बीकानेर
भलेराम आर्य, सांघी
कर्मवीर आर्य, रेवाड़ी
विधि परामर्शक : जगरूपसिंह तंवर
कार्यालय व्यवस्थापक : रविन्द्रकुमार आर्य
कम्प्यूटर सज्जा : बिशम्बर तिवारी

मूल्य
एक प्रति : १०.०० रु.
वार्षिक : १००.०० रु.
आजीवन : १०००.०० रु.

कार्यालय :
७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक,
जीन्द–१२६१०२ (हरियाणा)
दूरभाष : ६४१६२–५३८२६
ई-मेल-shantidharmijind@gmail.com

परमात्मा की आज्ञा के अनुकूल वेदोक्त कर्म उपासना और ज्ञान के द्वारा मल, विक्षेप और आवरण इन तीनों दोषों को दूर करके आत्मा के स्वरूप को जानो और उससे आत्मबल प्राप्त कर निर्भय हो जाओ!
–स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती

आलेख

देव दयानन्द की याद में ८
आइये एक दीपक मन में जलाएँ ९
दयानन्द ने मृत्यु को जीत लिया-- ११
बाल्मीकि रामायण : प्रमुख घटनाओं की वास्तविकता १३
हमारी न सही इनकी तो मानिये-- १६
आर्यसमाज गाँधी, गोडसे और हिंसा १८
वैदिक शिक्षा तथा शूद्र २१
संस्कारविहीन शिक्षा : बढ़ते अपराध २३
मत बाँटो इंसान को २५
एक भूला बिसरा क्रांतिकारी : पृथ्वीसिंह आजाद २७
गृहस्थ यज्ञ है ३५
दुःखों का घर नहीं है गृहस्थ ३६
वेद के संबंध में महापुरुषों के विचार ३७
दयानन्द वेदभाष्य : एक अध्ययन ३९
जीवन यात्रा ४२
आयुर्वेद में तिल के प्रयोग ४४
क्यों विश्व गुरु था भारत? ४८
प्राचीन भारतीय वैज्ञानिक : भास्कराचार्य, महर्षि चरक ४९
हाकी के जादूगर : ध्यानचन्द ५०

कहानी/प्रसंग : हिन्दू सम्राट् हेमचन्द्र विक्रमादित्य : ३०, फीके रंग : ३३, स्वामी दयानन्द के प्रेरक प्रसंग ४७, हीरा कीचड़ से निकल गया ४८
कविताएँ- ८, १५, २२, २४, २६
स्तम्भ-आपकी सम्मतियाँ ५, अनुशीलन, सोम सरोवर ६ चाणक्य नीति, अमृतवचनावली ७, बाल वाटिका ४६, भजनावली ५३,
साथ में : समाचार सूचनाएँ

वेद-विचार

सामवेद आग्नेय पर्व

पद्यानुवाद : स्व० आचार्य विद्यानिधि शास्त्री

न तस्य मायया च न रिपुरीशीत मर्त्यः।
यो अग्नये ददाश हव्यदातये।।१०४।।

भव्य हव्य के दाता प्रभु के प्रति जो कुछ भी देता है।
उस पूजक यजमान मनुज को प्रभु झट अपना लेता है।।
ऐसे भक्त पुरुष का रिपुजन बाल न बांका कर पावें।
माया से वश में करने के इच्छुक वे मुंह की खावें।।

पूर्ण सम्पादक मण्डल अवैतनिक है। पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचारों से सम्पादक मण्डल का सहमत होना अनिवार्य नहीं है। किसी भी प्रकार के विवाद का न्याय क्षेत्र जीन्द होगा।

शान्ति प्रवाह

❑चन्द्रभानु आर्य

पर्व समाज को जोड़ते हैं, आज हम पर्व तो पहले से ज्यादा भव्यता के साथ मना रहे हैं, लेकिन मनुष्य समाज का विखण्डन बढ़ता ही जा रहा है। मनुष्य अपने दायरे छोटे----और छोटे करता जा रहा है। उसकी आकांक्षाएँ अन्ततः निज पर आकर केन्द्रित हो जाती हैं। मनुष्य स्वहित चाहता है, लेकिन वह स्वहित करता नहीं है। वह समाज के सर्वहितकारी नियम को तोड़ता है-तो वह स्वयं ही उसके फन्दे में फँस जाता है। मनुष्य और समाज के सम्बंध सहज स्वाभाविक हैं। जब मनुष्य इसमें कोई व्यवधान पैदा करता है तो उसकी प्रतिक्रिया तुरन्त होती है। जब वह सर्वहित का ध्यान रखते हुए स्वहित करता है तो उसके स्वहित और सर्वहित दोनों हो जाते हैं, लेकिन जब वह स्वहित के लिए सर्वहित का उल्लंघन करता है तो उसका हित नहीं हो सकता।

मनुष्य की सोच संकुचित होने का कारण यह है कि वह प्रकाश की उपासना छोड़कर अंधकार का गुलाम बन गया है। उसकी दृष्टि विस्तार को नहीं देखती। जब हम प्रभु प्रदत्त दृष्टि से इस सृष्टि को देखते हैं तो सब कुछ अपना ही अपना दिखाई देता है। जब हम सृष्टि के रचयिता की शरण में बैठकर उसकी रचना और पालन प्रक्रिया को देखेंगे तो अन्दर बाहर आलोकित हो उठेंगे। जिस दिन हम प्रभु की आराधना को औपचारिकता समझना छोड़ देंगें- उस भक्ति को, उस उपासना को आत्मसात् करने लगेंगे; जब हमारी भक्ति मन्दिरों की टालियों, मस्जिदों की अजानों के बन्धन से छूटकर हमारे हृदय में समा जाएगी तब हम अपने आप को इस संसार का अंग समझने लगेंगे और इस संसार को अपना शरीर। जब हमारी भक्ति हमारे व्यवहार में झलकेगी तभी हम सही अर्थों में आस्तिक व धार्मिक बन पाएँगे।

कौन बड़ा नहीं बनना चाहता? पर्व में निहित यज्ञ की भावना हमें बड़ा बना सकती है। यज्ञ है ही बड़ा बनने के लिए। येन यज्ञस्तायते सप्तहोता। संकुचित वृत्तियों से निस्तार पाने के लिए ही यज्ञ है। जब कोई श्रेष्ठ कर्म किया जाता है तो वह हमें बड़ा बनाता है। यज्ञ तो श्रेष्ठतम कर्म है। जितने भी यज्ञ किये जाते हैं वे अपने आप को यज्ञ बनाने के लिए किये जाते हैं। आओ! ऐसा यज्ञ करें कि यह जीवन ही यज्ञ हो जाए। इस जीवन में ऐसी सुगन्धि उठे कि ईर्ष्या स्वार्थ छल कपट की दुर्गन्ध समाप्त हो जाए, यह संसार ही महकने लगे। जो अपने जीवन को यज्ञ बना लेता है वह महामृत्युञ्जय हो जाता है। जिसके मन में यज्ञ की भावना समा गई है वह वास्तव में आस्तिक है। जो आस्तिक है वही सच्चे अर्थों में धार्मिक है, उसके अन्दर पक्षपात की भावना नहीं आ सकती। ईश्वर में विश्वास का तात्पर्य है ईश्वर की व्यवस्था में विश्वास। ऋषियों ने तो ज्ञान की निन्दा करने वाले को नास्तिक कहा है **''नास्तिको वेदनिन्दकः''** ज्ञान से विपरीत आचरण करने वाला नास्तिक है। आज संसार में स्वयं को आस्तिक कहने वाले ज्यादातर लोग नास्तिक नजर आते हैं। जो ईश्वर-ईश्वर तो करते हैं, परन्तु ईश्वर के ज्ञान का आचरण नहीं करते। कथनी और करनी में यह अन्तर ही अन्धकार की उपासना है-

अन्धतमः प्रविशन्ति येऽविद्यामुपासते। ततः भूयो इव ते तमो, ये उ विद्यायां रताः।

जो अविद्या की उपासना करते हैं, वे तो अन्धकार में गिरते ही हैं, लेकिन उनसे भी अधिक भंयकर अन्धकूप में वे गिरते हैं जो केवल विद्या के शब्द जाल मात्र में उलझे हैं, आचरण में शून्य हैं।

अविद्यायामन्तरे विद्यमानाः स्वयं धीराः
पण्डितंमन्यमानाः
दन्द्रम्यमाणाः परियन्ति मूढ़ा अधेनैव नीयमानाः
यथान्धाः।। कठो ०२/५

संसार के लोग अविद्या में फंसे हुए, सांसारिक भोगों में पड़े हुए अपने को धीर और पण्डित माने फिरते हैं इधर-उधर भटकते हुए ये मूढ़ ऐसे जा रहे हैं जैसे अन्धे को अन्धा रास्ता दिखा रहा हो।

जिस दिन हम कथनी और कथनी की एकरूपता को स्थापित कर पाएँगे-उस दिन संकुचित वृत्ति समाप्त हो जाएगी। जब हम सर्वशक्तिमान प्रभु की शरण में जाएँगे- तब विस्तार पा जाएँगे। तभी वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को आत्मसात् कर सकते हैं और इसका तात्पर्य समझ सकते हैं, जब हम परिवार में तो मिलकर बैठ नहीं सकते और सारे संसार को एक करने का नारा लगाते हैं तो इससे ज्यादा धोखा क्या होगा।

यह प्रकाश का पर्व बार-बार आता है हमें सचेत करने के लिए-ओ प्रकाश के उपासक! अब बहुत हो चुका। अब तो यह अन्धकार की लड़ाई जीतनी ही होगी। मिट्टी का दीपक जलाते-२ युग व्यतीत हो गए। अब तो अन्तर्मन की ज्योति जगानी होगी। तभी प्रकाश पर्व की सार्थकता है।

आपकी सम्मतियाँ

शांतिधर्मी का सितम्बर अंक मिला, धन्यवाद! सम्पादकीय 'मनुष्य बनाने की शिक्षा' निस्सन्देह प्रेरक और मार्गदर्शक है। लार्ड मैकाले ने जो शिक्षा प्रणाली शुरु की थी, वह गुलाम बनाने वाली पद्धति थी। इस शिक्षा पद्धति का देशभक्ति, संस्कारों, नैतिकता, संवेदना, सभ्यता के साथ दूर दूर का भी कोई रिश्ता नहीं है। कितनी सरकारें आईं और गईं, पर मैकाले का मोह कोई नहीं छोड़ सका। आज ऐसी शिक्षा प्रणाली की आवश्यकता है, जिससे मर्यादा, संयम, परिश्रम, ईमानदारी, आपसी भाईचारा, प्रेम, करुणा, चरित्र तथा सर्वहित की भावना को बढ़ावा मिले। श्री सहदेव समर्पित का आध्यात्मिक लेख ज्ञानवर्धक है। विमलेश बंसल की व्यंग्यात्मक कविता अच्छी लगी। अभिमन्यु कुमार खुल्लर का लेख मननीय है। स्वास्थ्य चर्चा उपयोगी है। डॉ. सुरेशप्रकाश शुक्ल की कविता और बाल वाटिका की सामग्री ने प्रभावित किया।

प्रो. शामलाल कौशल
975-बी/20, ग्रीन रोड, रोहतक-124001

✉

सितम्बर अंक में शांतिप्रवाह में आपने शिक्षा के बारे में सामयिक विचार दिये हैं। जिस शिक्षा प्रणाली को गले से लगाए शताब्दी बीत गई, और उसका परिणाम यह है कि लाखों बेरोजगारों की फौज खड़ी हो गई। तो कोई कारण नहीं है कि इस असफल और कालातीत प्रणाली को जारी रखा जाए। महाशय श्रीपाल जी जैसे समर्पित व्यक्ति का परिचय पाकर अच्छा लगा। दो अंकों में श्री रामफल आर्य जी ने देश की वर्तमान चुनौतियों का सटीक वर्णन किया है, साथ ही उनके समाधान की ओर भी संकेत किया है। वीर गोकुला और किशोरी की शादी जैसे ऐतिहासिक प्रसंग आत्म गौरव की भावना को जगाते हैं और इस प्रकार की सामग्री केवल शांतिधर्मी में ही पढ़ने को मिलती है।

संदीप सिहाग
प्रोडक्शन मैनेजर, केडेबरी (प्रा. लि.)
ग्वालियर (म.प्र.)

✉

शांतिधर्मी के सितम्बर अंक में बालवाटिका ने मन मोह लिया। चार प्रेरक कहानियाँ और वे भी एक से बढ़कर एक--। अन्य सामग्री भी बहुत अच्छी लगी। आसथा गुड्डू के चुटकुलों ने तो हँसा हँसा कर बेहाल कर दिया। जानते हो-- में में नई नई जानकारियाँ मिलती हैं औश्र विचार कणिका से नई नई शिक्षा!

कीर्ति कटारिया, कक्षा 4 द्वारा श्री रामप्रताप कटारिया
ग्रा. पो. पाल्हावास, जिला रेवाड़ी-123401

नवसस्येष्टि का पर्व दीपावली

दीपावली मानव जाति का महत्त्वपूर्ण पर्व है। यह पर्व कार्तिकी अमावस्या को अज्ञात काल से मनाया जा रहा है। यह वह समय है कि जब वर्षा व शीत ऋतु की सन्धि हो रही होती है। ऋतुओं के सन्धि काल में व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं, इसलिए वैद्यक शास्त्रज्ञ ब्रह्मा से रोगनाशक ओषधियों का ज्ञान प्राप्त करके उनकी प्रभूत मात्रा में आहुतियाँ प्रदान की जाती हैं। यह पर्व नवसस्येष्टि का पर्व कहलाता है। इस समय कृषक अपने कृषि फल को देखकर आनन्दित हो जाते हैं। हों भी क्यों न, जब उनके घर धान, उड़द, मूंग, बाजरा व तिल आदि अन्नों से भरपूर होने को हैं। इस अन्न को यज्ञपूर्वक खाने का अधिकार है। भगवती श्रुति कहती है- केवलाघो भवति केवलादी अर्थात् अकेला खाने वाला पाप खाता है। दीपावली पर याजकों का मन उल्लास से भरा होता है। यही पर्व की पर्वता है। 'पर्वति पूरयति जनानानन्देनेति पर्व' जो मनुष्यों को आनन्द से पूर्ण कर दे वह पर्व है।

इस पर्व की पर्वता को युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती के निर्वाण की मृत्यु को भी आशीर्वाद देने वाली अति महत्त्वपूर्ण घटना ने और भी बढ़ा दिया है, क्योंकि महापुरुषों का देहावसान शोकोत्पादक नहीं अपितु प्रेरणादायक होता है। आइये हम दीपावली पर्व नवसस्येष्टि यज्ञ, अमावस्या के सघनतम अन्धकार को चीरती हुई दीपपंक्तियों से तथा महर्षि जी के गुणानुवाद से प्रेरणा ग्रहण करते हुए मनायें।

-आचार्य विष्णुमित्र वेदार्थी

अनुशीलन (सामवेद पावमान पर्व)

सोम सरोवर (चतुर्थ खण्ड)

गायत्री छन्दः । षड्ज स्वरः

सुख-स्वरूप शक्ति

❒पं० चमूपति जी

आ ते दक्षं मयोभुवं वह्निमद्या वृणीमहे। पान्तमा पुरुस्पृहम्।।१।।

ऋषि- भृगुः=तपस्वी

(ते) तेरे (पुरुस्पृहम्) जन-प्रिय (पान्तम्) रक्षक (वह्निम्) आग जैसा कार्यवाहक (मयोभुवम्) सुख-स्वरूप (दक्षम्) बल को (अद्य) आज इस प्रकार (आ-वृणीमहे) सब ओर से हम ग्रहण करते हैं (आ आ) जैसे सम्मुख हो।

मेरे अङ्ग-अङ्ग को स्फूर्त्ति देने वाले ताप! क्या तुम आग हो! निर्जीव जगत् को तुम्हीं सजीव करते हो? ठंडी दुनिया तुम्हारे कारण गर्म है। तुम्हीं ने इसे प्रारम्भिक ताप दिया था। तुम्हारे उस ताप ही के कारण इसमें अब तक गति है। अणु-अणु हिल रहा है। मैं इस ब्रह्माण्ड की गति को अपने पिण्ड में धारण कर रहा हूँ। इसका आलिङ्गन मानो किसी प्यारे का आलिङ्गन है। प्रभो! यह जीवन मेरा कहाँ है? जीवन तो सभी तुम्हारा है। मेरा पिण्ड ब्रह्माण्ड का एक अंश है। समुद्र की एक लहर है। सूर्य की एक किरण है। जो शक्ति संसार भर का कार्य चला रही है, उसी ने मेरी प्रत्येक क्रिया को क्रियमाण =वाह्यमान कर रखा है।

प्रियतम! नासिकाएँ मेरी हैं, पर श्वास तुम्हारा है। आँखें मेरी हैं पर रूप तुम्हारा है, ज्योति तुम्हारी है। कान मेरे हैं पर श्रवण आप का, शब्द आप का। मेरी समस्त अनुभूति आप की अनुभूति है।

इस अनुभूति में कैसा सुख अनुभव हो रहा है! तुम सुख-स्वरूप हो। तुम्हारी शक्ति सुख की प्रतिमा है। हम उसी शक्ति में जीते हैं।

इससे पूर्व हमारी दशा जो रही हो सो रही हो। आज तो हम तुमसे भिन्न कोई सत्ता ही नहीं रखते हैं। हमारा जीवन तुम्हारे आश्रय से है। हम ग्रहण-स्वरूप हैं। शक्ति के सरोवर में पड़े डुबकी लगाए जाते हैं। शक्ति तुम्हारी है, इसलिए शांत है, शिव है, सुन्दर है।

इस एक आत्म-समर्पण की वृत्ति ने हर आधि व्याधि से हमारी रक्षा कर दी है। अब हमें न चिन्ता है, न भय है। शक्ति के दुर्ग में आकर हम सुरक्षित हो गए हैं। अब तो हमारी चिन्ता का भार तुम पर है।

हमें क्या पता था कि शक्ति के स्रोत तुम्हीं हो? हमारा जीवन तुम्हारी देन है? हम इस जीवन का अपव्यय क्यों करते यदि पहले से ही इस जीवन के स्रोत को जान लेते? जीवन पवित्र है, पुण्य है, ईश्वरीय है। यह हेय नहीं, उपादेय है। अत्यंत उपादेय, अत्यंत वाञ्छनीय!

ईश्वरार्पण होने से यह पूर्णतया सुरक्षित है। हमारा काम है- इसे तुम्हारे रास्ते पर लगा देना। फिर इसे सफल करो, निष्फल करो- इसकी हम मानवों को क्या चिन्ता? हमारी सफलता समर्पण में है।

चाणक्य-नीति

सप्तमः अध्यायः

(क्रमागत)

स्वर्ग के चिह्न

स्वर्गस्थितानामिह जीवलोके
चत्वारि चिह्नानि वसन्ति देहे।
दानप्रसंङ्गो मधुरा च वाणी,
देवाऽर्चनं ब्राह्मणतर्पणं च।।१६।।

इस संसार में जो लोग स्वर्ग में हैं अर्थात् विशेष सुखी हैं, उनमें ये चार चिह्न होते हैं- १- उन्हें दान करने का अवसर मिलता है अर्थात् वे समर्थ भी हैं, और उनकी दान की भावना भी है। २- मधुर वाणी, ३- देव अर्थात् श्रेष्ठ पुरुषों की पूजा और ४-उनसे ब्राह्मण संतुष्ट रहते हैं। ब्राह्मण विद्या को समृद्ध करते हैं और ब्राह्मणों को समृद्ध करना श्रेष्ठ धनी पुरुषों का कार्य है।

नरक के चिह्न

अत्यंतकोपः कटुका च वाणी,
दरिद्रता च स्वजनेषु वैरम्।
नीचप्रसङ्गा कुलहीन सेवा
चिह्नानि देहे नरकस्थितानाम्।।१७।।

अत्यंत क्रोध, कटु वाणी, दरिद्रता और अपनों से वैर विरोध। ये चार चिह्न जिन लोगों में होते हैं, मानो वे नरक में रह रहे हैं।

गम्यते यदि मृगेन्द्र-मन्दिरं
लभ्यते करिकपोलमौक्तिकं।
जम्बुकाऽऽलयगते च प्राप्यते,
वत्स-पुच्छ खरचर्म खण्डनम्।।१८।।

कोई सिंह की गुफा में जाए तो उसे हाथियों की खोपड़ी में पाए जाने वाले मोती प्राप्त होते हैं। दूसरी ओर गीदड़ की गुफा में जाने पर किसी पशु के बच्चे की पूँछ या गधे का चमड़ा मिलता है। भाव यह है कि श्रेष्ठ पुरुषों के पास जाने से हमें श्रेष्ठ गुण और वस्तुएँ प्राप्त होती हैं और नीच व्यक्तियों के पास जाने से दुर्गुण और तुच्छ चीजें ही प्राप्त हो सकती हैं।

अमृत वचनावली

ज्ञानशतकम्

❑**डॉ० रामभक्त लांगायन** आई ए एस (से० नि०)

कौपं कौम्भं जलं वापि नादेयमथ चाम्बुदम्।
जलमिव तथा सृष्टेः स्रष्टा नामान्तरैर्युतः।।३८।।

पानी चाहे कुएँ का हो, घड़े का हो, जोहड़ का हो या नहर का हो वह पानी ही रहेगा, उसकी प्रकृति नहीं बदल सकती। इसी प्रकार परमात्मा, जिसने सृष्टि को रचा, उसके अनेक नाम हैं, अनेक नाम होने से उसकी प्रकृति नहीं बदलती।

धनं प्राप्तं बलं प्राप्तं किमसौ बुद्धिमान्नरः।
अकालपुरुषं प्राप्य सुयोगी बुद्धिमान्भवेत्।।३९।।

बुद्धिमान् वह नहीं, जिसने धन पा लिया, बल अथवा पराक्रम पा लिया। बुद्धिमान् वह है जिसने योगविद्या या सेवा भावना से परमात्मा में मन लगाया है।

दानं पृथिव्या अन्नस्य कन्यायाश्च गवामपि।
क्षणं सुखाय जायन्ते ज्ञानदाने चिरं सुखम्।।४०।।

अन्नदान, पृथ्वीदान, कन्यादान, गाय का दान सभी अच्छे हैं, लेकिन इनसे क्षण भर के लिए दुःख दूर होता है। विद्यादान व सत्संग के दान ऐसे दान हैं जो चिरकाल तक मनुष्य का दुःख हरते हैं।

मुकुरे स्वमुखं नास्ति, स्वमुखम् मुकुरे स्थितम्।
इन्द्रियार्थसुखम् भ्रांतिरात्मज्ञानं परम् सुखम्।।४१।।

दर्पण में मुख नहीं बल्कि मुख दर्पण में है। इन्द्रियों में सुख नहीं, वह मात्र भ्रांति है, भ्रम है। वह अन्तिम सुख नहीं है। तृप्ति केवल आत्मा को जानने से और परमात्मा को अपने अन्दर देखने से मिलती है।

अगाधमथ गम्भीरं जलं नावा सुतीर्यते।
सुशास्त्ररथया बुद्ध्या सर्वान्छत्रुञ्जयेद्बुधः।।४२।।

जिस प्रकार अगाध तथा गम्भीर सागर को नाव से तरा जा सकता है, उसी प्रकार ज्ञानवान् व्यक्ति उत्तम कल्याणकारी उपायों से समस्त दुःखों को पार कर सकता है।

देव दयानन्द की याद में!

❒आचार्य विष्णुमित्र वेदार्थी

आह! कार्तिक अमावस्या दीपावली संवत् 1940 को वह सायं 6 बजे का समय भी कैसा निर्मम था कि जिसने विश्व की विभूति और आर्यजनों के प्राणभूत मूर्त महर्षि को सर्वदा के लिए छीन लिया। आर्यजनों का अवलम्ब अविलम्ब निरवलम्ब हो गया। सहृदयों के अन्तर्हृदय का हर्ष उस दुष्ट वर्ष की बलि चढ़ गया। आर्य विचारों का प्रचार चिन्ता की चिता पर लेट गया। वेदभाष्य नैराश्य की आसन्दिका पर आसीन हो गया। सत्यासत्य के अन्वेषण का भूषण न जाने किधर खो गया। विधाता का क्रूर कटाक्ष अपनी कक्षा से निकल कर आर्यत्व की रक्षा के पक्ष पर ही टूट पड़ा। कोटि-कोटि जनता की भावनाओं का केंद्रबिन्दु अदृश्य हो गया। ब्रह्मचर्य व्रत का अनवरत सर्वोच्च आदर्श केवल स्मृति के श्यामपट्ट पर ही अंकित रहने के लिए एकाकी पड़ गया। विधवाओं का करुण क्रन्दन जिसका वन्दन करता था, अनाथों का चीत्कार जिसके सौहार्द्र का अभिनन्दन करता था, गोरक्षा का आन्दोलन जिसकी अन्त: अनुकम्पा का पुनीत पर्व था वह मंगलात्मक अभ्युदय भी विधाता को सहन न हुआ!! कुमार्ग के मानव मृग वाममार्गी जब वाममार्ग का जटिल पाश लेकर समस्त जन समुदाय को विभ्रान्त करने का षड्यन्त्र रच रहे थे, उनके कुचक्र को चकनाचूर करने वाला एक सर्वोच्च विचारक आ:! देखते ही देखते छीन लिया गया। पाखण्डखण्डिनी पताका का पता जिस प्रकार कानों कान फैल रहा था, उसका अन्तिम फल विफल करने के लिए ही संभवत: पक्षपाती काल ने फांसी का फन्दा फेंका होगा? आ: दैव! तुम्हे झूठे कर्मकाण्डियों के द्वारा यज्ञों में पशुबलि स्वीकार करना तो भाता रहा किन्तु जीव मात्र के हितैषी याज्ञिक की अहिंसक यज्ञ प्रक्रिया पर भौहें तानने का ताव चढ़ गया? ओ विधाता! कुछ तो बताओ, क्या तुम्हारा यह अभिप्राय है कि मानव मात्र को मानवता का अधिकार दिलाने वाली सच्ची वर्ण व्यवस्था सिसकती ही रहती? प्राणिमात्र का परम पावन परम प्रभु का परम पुनीत वेद ज्ञान जड़ पुस्तकों के जड़ पन्नों पर ही पड़ा सिसकता रहता???? हे परमपिता परमात्मन्! आप तो पूर्ण न्यायकारी, दयालु व शुद्ध हैं। यह जानते हुए भी धर्म के पुजारी देव दयानन्द के प्रति अतिशय प्रेम के कारण ही भावुकतावश बहुत कुछ अनुचित कह गया हूँ। आ:! सत्य सिद्धान्तों के आधार दयानन्द! कांच पिलाने वाले को भी आँच न आने देने के लिए धन की थैली देने वाले!!! 'प्रभु तेरी इच्छा पूर्ण हो' कह कर मृत्यु को भी आशीर्वाद देने वाले!! अद्भुतस्वरूप!! नयनाभिराम तुम्हें शत-शत प्रणाम है।

देव दयानन्द

लेखक : श्री सरदार सिंह 'सैनिक'

ढोंगियों की ढोल-पोल तर्कवादिता से खोल,
वीरता के बोल, बोल स्वामी हर्षाये हैं।
वेद को प्रकाश और सत्य को विकाश कर,
भक्त, भगवान के ऋषीश्वर कहाये हैं।
'सैनिक' सुचारु वेद-विद्या का प्रचार कर,
दीन असहायन पै आंसू बरसाये हैं।
कूट विष पान तथा देह बलिदान कर,
देव दयानन्द जी दिवाली को सिधाये हैं।

दीपावली

आइये एक दीपक मन में जलाएँ

-सहदेव समर्पित

आज भी सम्प्रदायवाद का पोषण, जातिवाद, ऊँच नीच, छुआछत, स्त्रीदमन, अन्धविश्वास, अशिक्षा व अत्याचार अन्याय आदि अन्धकार के प्रतिनिधि दनदनाते घूम रहे हैं। दीपावली के हजारों हजार दीपक भी उनके सामने असहाय दिखाई दे रहे हैं।

आईए, हम दीपावली को सच्चे अर्थों में मनाएँ। दीपक जलता है तो वह यह नहीं सोचता कि सारा अंधकार मिटेगा या नहीं। वह स्वयं जलकर एक कोने को ही सही, अंधकार से मुक्त कर देता है। हम प्रकाश की एक किरण अपने अन्दर भी जाने दें।

कहा जाता है कि भारत में इतने दिन नहीं होते, जितने त्योहार मनाए जाते हैं। उनमें से दीपावली का त्योहार न केवल सम्पूर्ण भारतवर्ष में अपितु भारत से बाहर भी पूर्ण हर्षोल्लास से मनाया जाता है। ऐतिहासिक दृष्टि से देखें या सांस्कृतिक दृष्टि से, दीपावली की योजना और क्रियान्वयन किसी भव्य सामाजिक परम्परा की देन प्रतीत होती है। यह पर्व कब से मनाया जाता है, इस सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता, लेकिन इतना तो बाल्मीकि रामायण व रामचरितमानस के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि न तो विजयादशमी के दिन रामचन्द्र जी ने रावण को मारा था और न ही श्रीराम दीवाली पर अयोध्या लौटे थे। मूलतः यह एक सामाजिक सांस्कृतिक पर्व है, जो संभवतः राम के पहले भी मनाया जाता रहा है।

दीवाली मूलतः एक सांस्कृतिक पर्व है, लेकिन संस्कृति का अर्थ यह न समझा जाए जो आज प्रचलित है। आज जीवन मूल्य बदले हैं तो संस्कृति के अर्थ भी बदले हैं। एक से एक भौंड़े अश्लील कार्यक्रम सांस्कृतिक आयोजनों के नाम पर परोसे जाते हैं। संस्कृति मूलतः संस्कारों का समूह है, और संस्कार के अर्थ विकार के उलट हैं। मानव-संस्कृति की समृद्धि मूलतः सामाजिक सम्पत्ति है। स्वार्जित समृद्धि को भी अकेले भोगना हमारी संस्कृति का अंग नहीं है, बल्कि जो हमें मिलता है, उसके प्रति पहले प्रभु का धन्यवाद करके बाँटते हैं। बाँटने का नाम यज्ञ है। बल्कि यह कहें कि यज्ञ बाँटने की प्रक्रिया है। बाँटना वस्तुतः बढ़ाना है, कम करना नहीं है। जो वस्तु एक का लाभ करती न करती, वह अब पूरे समाज के लिए लाभकारी बन रही है।

दीपावली नवशस्येष्टि यज्ञ है। जो हमने नया अन्न प्राप्त किया है, उसका सर्वप्रथम अंश उपकार के लिए जाता था। इससे देवताओं की पूजा भी होती थी, हम साथ मिलकर सामाजिक सौहार्द भी बढ़ाते थे और परोपकार व दान की परम्परा को भी समृद्ध करते थे। एक वासन्ती नवशस्येष्टि है, जिसे होली कहते हैं। यह शारदीय नवसस्येष्टि है, जिसे दीपावली कहते हैं। यह उल्लास का पर्व है। चारों तरफ समृद्धि बरसती है। सप्ताह भर पहले इसका उल्लास प्रकट होने लगता है।

द्वादशी को बलि जयन्ती मनाई जाती है। बलि प्रजापालक और प्रतापी राजा थे। यह उनकी जयन्ती है। पुराणों में इस सम्बन्ध में भगवान के सिर एक अपराध जोड़ दिया गया है। विष्णु भगवान ने तीन पग धरती मांगी, दानी राजा ने इसे स्वीकार कर लिया। भगवान ने अपना आकार बढ़ाकर एक पग से पृथ्वी व दूसरे से आकाश नाप लिया। तीसरा पग बलि पर रखने लगे तो वह पाताल लोक में भाग गया। भगवान के अवतार लेने की मान्यता अर्वाचीन है। और फिर भगवान ऐसे न्यायी, प्रतापी प्रजावत्सल राजा पर यह अत्याचार क्यों करता! बलि जयन्ती से इस घटना का कोई तार्किक सम्बन्ध भी नहीं है। यह किसी लाल-बुझक्कड़ की कल्पना है। प्रतापी न्यायकारी राजाओं की जयन्तियाँ मनाई ही जाती हैं।

त्रयोदशी धन-तेरस है। यह आयुर्वेद के आचार्य धन्वन्तरि की जयन्ती है। आयुर्वेद हमारे जीवन का महत्त्वपूर्ण अंग है। आयुर्वेद के सम्बन्ध में अनेक अनुसन्धान होते रहे

हैं। यह आयुर्वेद को अपनाने की प्रेरणा देने वाला पर्व है। नरक चतुर्दशी नरक पर विजय प्राप्त करने की प्रेरणा देती है। नरक दु:ख विशेष का नाम है। आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक दु:खों से छुटकारा तो श्रीकृष्ण जैसा जितेन्द्रिय योगी ही प्राप्त कर सकता है। कहा जाता है कि श्रीकृष्ण ने नरकासुर का वध कर १६१०८ लड़कियों को छुड़ाकर उनसे विवाह किया था। १६१०८ रानियाँ श्रीकृष्ण की होना एक हास्यास्पद बात है और इस कल्पना का श्रीकृष्ण के चरित्र से मेल नहीं खाता।

दीपावली के अगले दिन विश्वकर्मा दिवस मनाया जाता है। विश्वकर्मा परमात्मा का भी एक नाम है। साथ ही यह एक ऋषि का नाम भी है, जो बाद में शिल्पकर्म के आचार्यों की उपाधि बन गई। शिल्पकर्म भारतवर्ष में पुष्पित पल्लवित विद्या है। यम द्वितीया को यम की पूजा की जाती है। यम मृत्यु के देवता को कहते हैं, वास्तव में यम नाम वायु का है। जिसके माध्यम से जीव एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में जाता है। यम की पूजा का मतलब यम का आचरण है। यम का पालन करके ही यम (मृत्यु) से छुटकारा पाया जा सकता है। योग का पहला अंग यम है। यह वास्तव में योग की प्रारम्भिक परीक्षा है। यम पाँच हैं- अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह। यम द्वितीया का मूल तत्त्व तो यही है और इसी का अनुसरण मानव समाज के लिए उपयोगी है। जो यम की पूजा करता है, यम नियमों का पालन करता है, उसकी अकाल मृत्यु नहीं होती। इसका सम्बन्ध भाई-बहन के पवित्र रिश्ते से भी जुड़ा हुआ है। बहनें भाईयों की दीर्घायु की कामना करती हैं।

पूजा का मतलब तो उसे अपनाना, बढ़ाना, संवारना है। वास्तव में जिस भी वस्तु के प्रति हमने अपने कर्त्तव्य को छोड़ दिया-उसकी पूजा करनी शुरू कर दी। यही हाल गोवर्धन पूजा का है। श्रीकृष्ण महाराज ने गोवर्धन के विषय को उठाया था कि देशवासियो! यदि तुम सुख समृद्धि चाहते हो तो गोवर्धन करो, गौवों का पालन करो। कहानीकारों ने उनसे गोवर्धन पर्वत उठवा दिया और हम लोग गोबर का पुतला बनाकर उसे पूजने लगे। यही नहीं, गौवों के नाम पर बड़े-बड़े भाषण देने वाले, जनक्रान्ति का आह्वान करने वाले लोग गौवों को नहीं पालते।

लक्ष्मी धन की देवी है। लक्ष्मी गृहस्वामिनी भी है। घर में स्त्री का सम्मान सत्कार होना चाहिए। यदि गृहदेवी का सम्मान नहीं होगा तो धन-समृद्धि नहीं आ सकती। फिर आए हुए धन की पूजा अर्थात् उसका समुचित उपयोग भी जरूरी है। बिना विवेक के धन विनाशकारी है। धन के उपयोग भी तीन ही हैं। यह तीन प्रकार से ही जा सकता है।

दानं भोगो नाशः तिस्रः गतयोः भवन्ति वित्तस्य।
यो न ददाति न भुङ्क्ते तस्य तृतीया गतिर्भवति।।

या तो उपकार के कार्यों में दान कीजिए या अपने ऊपर खर्च कर लीजिए अन्यथा तो वह नष्ट ही होगा। नष्ट नहीं भी होगा तो पड़ा-पड़ा क्या काम आएगा।

ज्ञात इतिहास में दीपावली अति महत्त्वपूर्ण है। महावीर स्वामी, रामकृष्ण परमहंस, गुरु हरगोविन्द से भी यह पर्व जुड़ा हुआ है। सम्राट् अशोक ने इसी दिन अपनी दिग्विजय की घोषणा की थी। कुषाण काल में इस दिन आयुर्वेद की उपाधियाँ दी जाती थीं और सबसे योग्य वैद्य को धन्वंतरि के सम्मान से सम्मानित किया जाता था। सम्राट् विक्रमादित्य ने इसी दिन विक्रम संवत् शुरू करने की घोषणा की थी। देश के कुछ भागों में तो दीवाली से ही नया संवत् मानते हैं। राष्ट्रकूट सम्राट् कृष्ण तृतीय के काल में दीपावली मनाए जाने के प्रमाण मिलते हैं। आचार्य श्रीपति ने ग्यारहवीं शताब्दी में महाराष्ट्र की दीपावली का वर्णन किया है।

सन् १८८३ के अक्टूबर मास की दीपावली भारत के भाग्योदय की काली दीवाली के नाम से जानी जाएगी। हजारों वर्ष बाद इस धरती पर एक ऋषि का जन्म हुआ-जिसने अपने थोड़े से कार्यकाल में अज्ञान व अंधकार के मायाजाल को वेद ज्ञान पताका लेकर छिन्न-भिन्न कर डाला था। जिसके सामने आते ही, जिसका नाम सुनते ही स्वार्थी मतवादियों, मानवता को बाँटने वाले धर्म के ठेकेदारों के चेहरे पीले पड़ जाते थे। जिस अकेले महारथी ने ज्ञान के, बल से अनेक मोर्चों पर लोहा लिया और दिग्विजय प्राप्त की, उस महामानव महर्षि दयानन्द को विष देकर मार डाला गया। ३० अक्टूबर (दीवाली) १८८३ को उन्होंने शरीर छोड़ा। अतः उनका बलिदान दिवस मनाया जाता है।

कुछ प्रयासों को छोड़ दें तो आज उनका बलिदान दिवस औपचारिकता मात्र रह गया है। आज भी सम्प्रदायवाद का पोषण, जातिवाद, ऊँच-नीच, छूआछत, स्त्रीदमन, अन्धविश्वास, अशिक्षा व अत्याचार अन्याय आदि अन्धकार के प्रतिनिधि दनदनाते घूम रहे हैं। दीपावली के हजारों हजार दीपक भी उनके सामने असहाय दिखाई दे रहे हैं।

आईए, हम दीपावली को सच्चे अर्थों में मनाएँ। एक छोटा सा दीपक जलता है तो वह यह नहीं सोचता कि उसके जलने से सारा अंधकार मिटेगा या नहीं। वह स्वयं जलकर एक कोने को ही सही, अंधकार से मुक्त कर देता है। हम प्रकाश की एक किरण अपने अन्दर भी जाने दें। क्योंकि अन्दर का अंधकार बाहर के अंधकार से भी अधिक खतरनाक है। जब हमारे अन्दर का दीपक जलेगा तो बाहर सारा संसार स्वयमेव जगमगा उठेगा।

बलिदान दिवस दीपावली

दयानन्द ने मृत्यु को जीत लिया

❒स्व० पं० मनुदेव अभय

नियमित स्वाध्याय करते समय इस मंत्र पर एक दम दृष्टि रुक गई और गहन चिन्तन हेतु मन थम सा गया।

ओ३म् मृत्युरीशे द्विपदां मृत्युरीशे चतुष्पदाम्।
तस्मात् त्वां मृत्योर्गोपतेरुद्भरामि स मा बिभेः।।

अथर्ववेद ८–२–२३

अर्थः– दोपायों पर मृत्यु शासन करता है और मृत्यु ही चौपायों पर शासन करता है। उस गोपति (इन्द्रियों का स्वामी) मृत्यु से तुझको ऊपर उठाता हूँ, बचाता हूँ। तू मृत्यु से बिल्कुल मत डर।

यहाँ मृत्यु को 'गोपति' इसलिए कहा गया है कि इसका शासन केवल शरीर की इन्द्रियों पर ही, केवल 'छिति, जल, पावक, गगन, समीरा' पंच रचित यह महा सरीरा अर्थात् इन तत्वों से बने इस शरीर और शरीर में विद्यमान इन्द्रियों तक ही है। किंतु यह सिद्धान्त सदैव स्मरण रखने योग्य है कि आत्मा पर मृत्यु का अधिकार नहीं, आत्मा अजर–अमर है।

ऋषि समझाते हुए कहते हैं कि तू मृत्यु से मत डर। तू चाहे तो मैं तुझे इस गोपति=मृत्यु से बचा सकता हूँ। शरीर वियोग मृत्यु नहीं, मृत्यु तो अशस्ति=निन्दित आचरण है, इसको छोड़ दो, फिर मृत्यु–पाश=मौत के फन्दे टूट जाएँगे। इसी प्रकार अथर्ववेद में एक स्थान पर मनुष्य को निर्भीक बनाने हेतु कहा गया है–इस अशस्ति अर्थात् मृत्यु के भय से छूटने का एक मात्र साधन है–ब्रह्म को अपना घेरा बना लेना। ब्रह्मास्मै वर्म कृष्मसि अर्थात् हम ब्रह्म को कवच बना देते हैं। ब्रह्म कवच पर मृत्यु वार नहीं कर सकती। यदि जीवन की इच्छा है तो कहना चाहिए–ब्रह्म वर्म ममान्तरम् (ऋग्वेद ६–७५–१८) अर्थात् ब्रह्म मेरा अन्दर का कवच है।

वेदोन्नायक महर्षि दयानन्द ने ऋग्वेद की इस ऋचा के अनुसार परमेश्वर (ब्रह्म) को अपने अन्दर का कवच धारण कर रखा था। कहा जाता है कि महाराणा प्रताप युद्ध में जाते समय ऊपर बख्तरबन्द (लौह कवच) तथा अन्दर परमात्मा की भक्ति का कवच धारण कर बाहर प्रस्थान करते थे और विजयी होकर लौटते थे।

मृत्यु से पूर्व महर्षि दयानन्द ने संन्यास–धर्म के अनुसार फफोलों से भरे अपने सिर का क्षौर भी करवाया था। क्षौर–कर्म करते समय भी उन्होंने कष्ट नहीं अनुभव किया था। निकट खड़े हुए डॉक्टर ने आश्चर्य व्यक्त करते हुए कहा था– नापित (नाई) के तेज उस्तरे की धार से फफोले कटने पर भी इस संन्यासी ने आह या उफ तक नहीं किया। ऐसी कौन सी बात है कि यह संन्यासी यह शारीरिक कष्ट अनुभव ही नहीं कर रहा है। कौन जानता था कि–महर्षि दयानन्द ने अन्दर से ब्रह्म को अपना कवच बना रखा था। मृत्यु उनके सम्मुख बेबस खड़ी थी। वह केवल दयानन्द की इन्द्रियों को ही नष्ट कर सकती थी, अन्दर विद्यमान आत्मा तो पूर्ण संस्कारित थी। आत्मा को पूर्व में नहीं मार सकी है, वर्तमान में भी नहीं मार सकेगी और भविष्य में मृत्यु आत्मा की अजरता, अमरता के सम्मुख सदैव की भाँति पराजित होती रहेगी।

----और हाँ, आज अमावस्या की साँझ को मृत्यु अपने दल–बल सहित दयानन्द को पराजित करने आई थी, किन्तु स्वयं पराजित होकर चली गई। शिकार करने आई थी वह, किन्तु स्वयं शिकार बन गई। अजमेर के भिनाय महालय में सायंकाल महर्षि दयानन्द ने कहा था–सब ओर के दरवाजे और खिड़कियाँ खोल दो। मेरे सम्मुख कोई भी मत खड़े रहो। विज्ञान का विद्यार्थी अपने साथियों के साथ दयानन्द के सिर की ओर खड़ा हुआ यह सब कुछ देख रहा था। मृत्यु के कुछ समय पूर्व ऋषि दयानन्द उठे और आसन लगाकर अपना प्रिय वेद–मंत्र– ''ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रं तन्न आसुव (यजु० ३०/३) का धीमे स्वर में पाठ किया, फिर कुछ और मन्त्रों का ओंठ हिलाकर उच्चारण किया। फिर तख्त पर बाईं ओर मुस्कराते हुए लेट

गये। फिर बोले- 'प्रभु तेरी इच्छा, तूने अच्छी लीला की। तेरी इच्छा पूर्ण हो।' ओ३म्--- कहते हुए एक दीर्घ सांस ली और फिर उसे छोड़कर अपने प्रिय प्रभु की शरण में सदा के लिए चले गए। उस सांस के साथ ब्रह्म के कवच से लम्पित वह महान आत्मा भी शरीर को छोड़कर चली गई। मृत्यु अपनी पराजय पर झुंझलाती वापस लौट गई। अंतिम दृश्य था यह उस भिनाय महालय में।

अंतिम समय में दयानन्द के ओठों की मुस्कराहट, शांत मुखमण्डल तथा नेत्रों में किसी प्रिय से मिलने की शीघ्र आतुरता---ने विज्ञानाचार्य पं० गुरुदत्त के नास्तिक मन-मस्तिष्क को झकझोर डाला। उन्हें अनुभव हुआ कि मृत्यु को केवल ब्रह्म को आंतरिक आत्मा का कवच बनाकर ही पराजित किया जा सकता है।

एक दार्शनिक से पूछा गया-क्या कारण था कि सुकरात अपने ही हाथों में जहर का प्याला पकड़कर पूरा जहर पी गया? बंदा बैरागी अपने शरीर पर पड़े कोड़ों की मार से उफ तक नहीं करता था। हकीकत राय ने हंसते-हंसते अपनी गर्दन पैनी तलवार के सम्मुख कर दी। अनेकों देशभक्त हंसते-हसंते फांसी के फंदे को गले में लटका कर मातृभूमि पर बलिदान हो गये? दयानन्द के शरीर में घातक विष उनकी मुस्कान नहीं छीन सका? उस दार्शनिक ने इन सभी प्रश्नों का उत्तर एक वाक्य में इस प्रकार दिया-जब आत्मा अपना सम्बन्ध शरीर की इन्द्रियों से पूरी तरह हटा लेता है, तब शारीरिक-वेदनाओं का अनुभव वह नहीं करता। तब उस आत्मा का सम्बन्ध आनन्दमय परमात्मा से हो जाता है और वे आनन्द के साथ झूमने लगते हैं, हंसने लगते हैं तथा दयानन्द के समान मुस्कराने लगते हैं।

महर्षि दयानन्द के शरीर का अन्त्येष्टि संस्कार पूर्ण होने के उपरान्त गुरुदत्त विद्यार्थी इसी संस्कार को लेकर लाहौर वापस लौट आये। वे दयानन्द की मृत्यु के इस अंतिम दृश्य से इतने प्रभावित हुए कि पूर्ण आस्तिक बनकर लौटे और वैदिक धर्म के प्रचार में मृत्युपर्यन्त लगे रहे।

यहाँ हम एक महत्वपूर्ण बिन्दु ''महर्षि दयानन्द का निर्वाण हुआ'' पर कुछ विचार करना चाहते हैं। संस्कृत हिन्दी कोष-डॉ० वामन शिवराम आप्टे द्वारा सम्पादित कोष में निर्वाण का अर्थ-फूंक कर बुझाया हुआ (आग या दीपक की भांति)। माया या प्रकृति से मुक्ति पाकर मिलन- शाश्वत आनन्द। बौद्ध विषयक-सांसारिक जीवन से व्यक्ति का पूर्ण निर्वाण, बौद्धों की मोक्ष प्राप्ति, पूर्ण और शाश्वत शांति/साहचर्य संगम (पृष्ठ ५३७) कुछ आर्य विद्वानों की धारणा या सम्मति है कि महर्षि दयानन्द का निर्वाण हुआ थ। यदि इस तथ्य पर वैदिक दृष्टिकोण से विचार करें तो महर्षि दयानन्द 'सान्त मोक्ष' के समर्थक थे।

उन्होंने संस्कार विधि में स्पष्ट लिखा है कि- ''अल्पज्ञ जीवात्मा के सान्त कर्म होते हैं। सान्त कर्मों का फल अनन्त नहीं हो सकता। मुक्ति के पश्चात जीव का इस लोक में पुनरागमन होता है।'' इस वैदिक सिद्धान्त को दृष्टिगत रखकर यह कहा जा सकता है कि दीपावली की अमावस्या पर महर्षि दयानन्द का बलिदान हुआ था। यह उनका निर्वाण दिवस नहीं है। महर्षि दयानन्द की यह मृत्यु न तो इच्छा मृत्यु थी और न स्वाभाविक। दुष्टों द्वारा विष देने के कारण उनके शरीर का नाश हुआ। मृत्यु के पूर्व वे अन्यों की तरह न तो रोये और न प्राण रक्षा के लिए चीखे-चिल्लाये। यह तो उनका बलात् वध था। हमारी भी यही ध्रुव धारणा है कि दयानन्द का निर्वाण नहीं, अपितु बलिदान हुआ था। बलिदान के अंतिम समय में भी वह दिव्य आत्मा अनेकों को आस्तिक और वेदभक्त बना गई।

अन्त में इस रहस्य पर भी विचार करना है कि महर्षि दयानन्द अपने अन्तिम समय में, मृत्यु को आसन्न जानकर भी मुस्करा रहे थे, ऐसा क्यों हुआ? इस रहस्यमयी मुस्कान के प्रमुख तीन कारण थे-प्रथम 'परमात्मा में अटूट विश्वास द्वितीय-आत्मा का स्वरूप और उसके लक्षण का ज्ञान तथा पदार्थों का त्यागभाव से उपयोग।'

हमारे धर्मशास्त्रों में मृत्यु पर विजय प्राप्त करने के ३ उपाय बताये गये हैं। महर्षि दयानन्द ने परमात्मा के स्वरूप का वर्णन आर्यसमाज के नियम संख्या दो में बहुत ही सुन्दर ढंग से किया है। यथा 'ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप--पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है, उसी की उपासना करनी योग्य है।' यही सिद्वान्त उनकी आत्मा का कवच था और मृत्यु से कभी भय नहीं करते थे।

द्वितीय- महर्षि दयानन्द 'आत्मा' को अजर-अमर मानते थे। वे आत्मा के छः लक्षणों से भलीभांति परिचित थे। इसके कारण वे सदैव आत्मा को परमानन्द प्रदान करने की तपस्या में रत रहते थे। आत्मा के कवच परमात्मा से ढका होने से भी वे निर्भीक थे।

तृतीय-उन्होंने सांसारिक पदार्थों का उपभोग त्याग भाव से किया। मृत्यु के पूर्व उन्होंने अपनी समस्त चल-अचल सम्पत्ति का दान 'परोपकारिणी' सभा बनाकर श्रेष्ठ आर्यजनों को कर दिया।

उपर्युक्त तीन तत्वों को आधार मानकर महर्षि दयानन्द मृत्यु पर्यन्त मुस्कराते रहे और परमात्मा की इच्छा को सर्वोपरि मानकर ही उन्होंने कहा था-परमात्मा तेरी इच्छा पूर्ण हो।

इस अवसर पर हम उस महान आत्मा के प्रति श्रद्धापूर्ण आदरांजलि अर्पित करते हैं।

बाल्मीकि रामायण की प्रमुख घटनाएँ वास्तविक स्वरूप

❑यशपाल शास्त्री
एच-९२, फेस १,
अशोक विहार दिल्ली-११००५२

अश्वमेध और पुत्रेष्टि यज्ञ

रामायण के आरम्भ में ही हम पढ़ते हैं कि राजा दशरथ सन्तानोत्पत्ति न होने के कारण बहुत दुःखी थे। इस दुःख की निवृत्ति के लिए उन्होंने अपने गुरुओं वसिष्ठ आदि ऋषियों से निवेदन किया। ऋषियों ने उन्हें अश्वमेध और पुत्रेष्टि यज्ञ करने की सलाह दी। यहाँ अश्वमेध यज्ञ की बात प्रक्षेपकारों के द्वारा डाली हुई है। इसके कई कारण हैं।

१-सन्तानोत्पति का सम्बन्ध पुत्रेष्टि यज्ञ से है, अश्वमेध यज्ञ से नहीं। सन्तान चाहने वाले राजा को पुत्रेष्टि यज्ञ के साथ अश्वमेध यज्ञ की सलाह दे देना ऐसा ही है, जैसे दिल्ली से मुंबई जाने के इच्छुक व्यक्ति से यह कहना कि पहले तुम कलकत्ता जाओ, फिर मुम्बई चले जाना।

२-अश्वमेध यज्ञ करना कोई छोटा कर्म नहीं था, जिसे थोड़े से प्रयत्न से सम्पन्न कर लिया जाता। विशेष ऐश्वर्यशाली और शक्तिसम्पन्न राजा ही उसे कर पाते थे। इस यज्ञ को करने में धन, समय और शक्ति तीनों की आवश्यकता होती थी। धन के विषय में तो कहा नहीं जा सकता कि राजा दशरथ के पास धन की कमी थी, पर समय की उनके पास अवश्य कमी थी। वे सन्तान प्राप्ति के लिए बेचैन थे और जल्द से जल्द अपनी इच्छा पूर्ति चाहते थे। ऐसी स्थिति में अश्वमेध यज्ञ को करने में महीने नहीं, अपितु वर्षों लग जाते थे, क्योंकि यज्ञ के घोड़े को पहले तैयारी करके यात्रा के लिए छोड़ा जाता था। वह घोड़ा सारे भू-मंडल की यात्रा करता था, उसके सकुशल लौटने पर ही यज्ञ की कार्रवाई होती थी। देश विदेश के राजा लोग निर्मंत्रित होकर आते थे, इस कार्य में कई वर्ष लग जाते थे। इतने अधिक समय तक राजा को एक ऐसे कार्य में उलझाए रखना, जिसका उनकी मुख्य समस्या से सम्बन्ध नहीं था, उचित नहीं कहा जा सकता।

३-अश्वमेध यज्ञ को कराना उस समय अपने को भू-मंडल में सर्वशक्तिशाली राजा घोषित करना होता था। इसलिये घोड़े को चुनौती के रूप में भू-मंडल की यात्रा पर भेजा जाता था। अर्थात् दूसरे राजा लोग या तो अश्वमेधकर्त्ता को अपने से अधिक शक्तिशाली मान कर उसके यज्ञ में भेंट लेकर उपस्थित हों या उसके घोड़े को रोक कर उसका मुकाबला करें, इसलिए वही राजा अश्वमेघ यज्ञ को कराता था जो अपने को अधिक शक्तिशाली समझता था। किन्तु रामायण को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि राजा दशरथ वीर तो थे, पर इतने नहीं थे कि रावण का सामना कर सकें। क्योंकि जब विश्वामित्र अपने यज्ञ की रक्षा के लिए राम और लक्ष्मण को मांगने के लिए आये तो उन्होंने बताया कि रावण के भेजे हुए राक्षस उनके यज्ञ में विघ्न डालते हैं, तब रावण का नाम सुनते ही राजा दशरथ घबरा गये थे और कहने लगे कि रावण का सामना तो मैं अपने समग्र साधनों से भी नहीं कर सकता, फिर ये मेरे बच्चे कैसे कर सकते हैं? ऐसी स्थिति में यदि राजा दशरथ अश्वमेध यज्ञ को करते तो क्या रावण उसे पूरा होने देता?

४-अश्वमेध यज्ञ की कहानी इसलिये भी प्रक्षिप्त लगती है, क्योंकि रामायण में दशरथ के अश्वमेध यज्ञ के सारे क्रिया-कलाप वाममार्गियों (जिनका प्रचार भारत में महाभारत के बाद बहुत बढ़ गया था) के अनुसार अर्थात् की मांस आहुति, मद्य मांसादि का सेवन तथा अन्य अवैदिक बातों से

भरे हुए हैं, पर राम के समय आर्यों का जीवन शुद्ध वैदिक पद्धति के आधार पर ही था। वेदों में कहीं भी इस प्रकार की बातों का निर्देश नहीं है। इससे प्रतीत होता है कि वाममार्ग के समर्थन के लिए ही रामायण में अश्वमेध की घटना का प्रक्षेप किया गया।

पुत्रेष्टि यज्ञ के वर्णन में भी एक अस्वाभाविक घटना जोड़ी हुई है। वह है यज्ञ कुण्ड में से खीर की थाली लेकर एक देव पुरुष का निकलना। ऐसा होना नितान्त असम्भव है। वह खीर वास्तव में आयुर्वेदविद् याज्ञिकों के द्वारा औषधियों से तैयार पुत्रदायिनी खीर थी। आयुर्वेद में ऐसी अनेक प्रकार की औषधियों से तैयार की जाने वाली खीर का वर्णन है, जिसका एक बार या अनेक बार प्रयोग करने से अवश्यमेव सन्तान की प्राप्ति होती है। उदाहरणार्थ रावण कृत अर्कप्रकाश से खीर योग प्रस्तुत है।–

अश्वगंधा भवार्केण, सिद्धं दुग्धं घृतान्वितम्।
ऋतुस्नाताङ्ना प्रातः पीत्वा गर्भं दधाति हि ।।

अर्थात् स्त्री ऋतु स्नान के अनन्तर अश्वगन्धा (असंगंध) के अर्क अथवा क्वात्थ के साथ सिद्ध किया हुआ दूध घृत सहित प्रातःकाल पान करे तो उसे अवश्य गर्भ स्थित होता है। रामायण में वर्णित खीर कुछ इसी प्रकार की थी, जो मुख्य पुरोहित ऋष्य शृंग के द्वारा यह कहकर कि यह खीर देवताओं अर्थात् विद्वानों के द्वारा (विद्वान् व्यक्ति को भी देव कहते हैं) तैयार की हुई है, यजमान और उसकी पत्नियों को खिलाने के लिए दी गई। तत्पश्चात् उस खीर रूपी औषधी के सेवन से दशरथ को सन्तान की प्राप्ति हुई।

अहिल्या उद्धार

अहिल्या उद्धार की कथा रामायण में प्रक्षेपकारों ने बाद में मिलाई है।

इसका पहला कारण तो यह है कि इस कहानी का मूल रूप से कोई ऐतिहासिक आधार नहीं है। शतपथ ब्राह्मण में रात्रि को अहिल्या, चन्द्रमा को गौतम और सूर्य को इन्द्र का रूपक बताते हुए उनके कार्य का विवेचन किया गया है। इसी रूपक में वर्णित कहानी को ऐतिहासिक समझ कर रामायण में जोड़ा गया।

दूसरे यह कहानी वरदान और शाप की शक्ति पर आधारित है, पर वरदान और शाप में कोई शक्ति नहीं है। वरदान और शाप का सम्बन्ध केवल मन की भावना से है। जब कोई किसी के गलत कार्य से दुःखी होता है तो उसके लिये बुरी कामना करता है और जब कोई किसी के अच्छे कार्य से प्रसन्न होता है तो उसके लिए अच्छी कामना करता है। बस इसी का नाम शाप और वरदान है। मेरे द्वारा किसी को शाप या वरदान दिये जाने पर मेरी कामना के अनुसार उसका बुरा या अच्छा कुछ भी नहीं होगा । परमात्मा अपने नियम के अनुसार सृष्टि का संचालन कर रहे हैं, हमारे शाप व वरदान देने के अनुसार नहीं। यदि वे हमारे शाप और वरदानों पर ध्यान देने लगें, तब तो प्रतिदिन न जाने कितने लोग कितनी बार दूसरों को अपने मन में शाप व वरदान देते रहते हैं, परमात्मा यदि उन्हें पूरा करने में लग जाये तो सृष्टि संचालन के सारे नियम गड़बड़ा जायें। यह बात अवश्य है कि जो किसी को दुःख या सुख पहुँचा कर उसके शाप या वरदान देने का उत्तरदायी बनता हैं, परमात्मा उसके उस बुरे या अच्छे का बुरा व अच्छा फल अपनी व्यवस्था के अनुसार अवश्य देता है, पर वह शाप व वरदान देने वाले के कहने के अनुसार नहीं देता । इसलिये वरदान और शाप की शक्ति पर आधारित होने के कारण यह कहानी असम्भव और अमान्य है।

तीसरे अहिल्या उद्धार कथा में गौतम के शाप से इन्द्र का अंग भंग हो जाना, अहिल्या का अदृश्य होकर तपस्या करने के लिये विवश हो जाना या पत्थर बन जाना और श्रीराम के स्पर्श करने से पुनः दृश्यमान हो जाने वाली घटनाएँ प्रकृति के नियमों के विपरीत हैं, असम्भव हैं, अतः अमान्य हैं। संसार में कहीं भी इस प्रकार की घटनाएँ नहीं होती हैं।

भारतीय संस्कृति में वेदों के आविर्भाव से लेकर महाभारत के युग तक स्त्री और पुरुष को समान व्यवहार और समान अधिकार दिये जाते रहे हैं, किन्तु इसके पश्चात् जब भारतीय समाज में गिरावट आई, तब पुरुषों का नारी जाति पर वर्चस्व स्थापित करने के लिये यह कहानी बना कर रामायण में जोड़ दी गयी, क्योंकि इसमें धोखे, बलात्कार और अपमान से पीड़ित अहिल्या को तो पत्थर बना दिया गया पर असली अपराधी इन्द्र को हजार नेत्रों वाला होने का वरदान दे दिया गया। यह ऐसे ही है जैसे अंग्रेजों के राज्य में एक ही तरह के अपराध को यदि हिन्दुस्तानी करता तो उसे कड़ी से कड़ी और यदि अंग्रेज करता तो उसे हल्की से हल्की सजा दी जाती थी।

सीता का जन्म और नामकरण

अनेक लोगों का सीता के विषय में यह विचार है कि उनका जन्म पृथ्वी से हुआ था, किन्तु यह विचार इन आधारों के अनुसार गलत है।

क– केवल सृष्टि के आरम्भ के समय सबसे पहले के मानव समुदाय को छोड़ कर अन्य किसी भी दूसरे समय पृथ्वी से किसी मनुष्य का उत्पन्न होना प्रकृति के नियम के विरुद्ध होने के कारण असम्भव है।

ख– रामायण में जनक जी ने सीता के बारे में बताते हुए

उसे ममात्मजा अर्थात् मुझ से उत्पन्न हुई कहा है। यदि सीता पृथ्वी से उत्पन्न हुई होती तो जनक उसे ममात्मजा नहीं कहते। ममात्मजा उसी पुत्री को कहा जा सकता है जो अपने वीर्य या शरीर से उत्पन्न हुई हो, गोद लेकर या किसी अन्य स्थान से प्राप्त कर पाली हुई सन्तान को नहीं कहा जा सकता।

ग– सीता राम के विवाह के समय जहाँ श्रीराम के पूर्वजों का परिचय दिया गया, वहाँ जनक के पूर्वजों का भी परिचय दिया गया। यह बात सिद्ध करती है कि सीता जनक की औरस पुत्री थी, खेत से लाकर पाली हुई नहीं, क्योंकि खेत से लाकर पाली हुई सन्तान का जनक जी के पूर्वजों से क्या सम्बन्ध? और फिर उनका परिचय किसलिये?

इसी सन्दर्भ में एक बात और विचारणीय है। राजा जनक ने रामायण में सीता जी को जहाँ ममात्मजा कहा है वहाँ उसे **'अयोनिजा'** भी कहा है। अयोनिजा शब्द का सामान्य अर्थ है– माता के पेट से न पैदा होने वाली–और सीता शब्द का अर्थ है–हल चलाने से भूमि पर पड़ी हुई लकीर। इन्हीं दोनों अर्थों के भ्रम से लोगों में सीता के खेत में से उत्पन्न होने की कहानी बन गयी। किन्तु अपने सामान्य अर्थ में भी 'ममात्मजा'अर्थात् मेरे वीर्य से उत्पन्न और 'अयोनिजा' अर्थात् माता के पेट से न पैदा होने वाली, ये दोनों शब्द एक दूसरे के विपरीतार्थक हैं। जो पिता के वीर्य से उत्पन्न हो, वह माता के पेट से न पैदा होने वाली कैसे हो सकती है? फिर राजा जनक जैसा विद्वान व्यक्ति एक ही समय में विपरीतार्थक शब्दों का प्रयोग क्यों करता? अतः यहाँ विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

योनि शब्द के शब्दकोष के अनुसार जहाँ अन्य अनेक अर्थ हैं, वहाँ उसका एक अर्थ 'घर' भी है, अतः 'अयोनिजा' शब्द का अर्थ हुआ– जो घर में पैदा नहीं हुई हो। वास्तव में सभ्य होते ही मनुष्य ने जीविकोपार्जन के लिये सर्वप्रथम खेती को ही अपनाया था। उस समय राजा लोगों के भी खेत होते थे और वे कभी–कभी समय निकालकर अपने कर्मचारियों के साथ खेत पर काम भी करते थे। जब वे खेत पर काम करते थे, तब उसके विश्राम के लिये वहाँ अस्थाई विश्राम घर भी होते होंगे। राजा जनक भी इसी प्रकार कभी रानी, जो आसन्न प्रसवा थी, के साथ खेत में हल चला रहे होंगे। उसी समय उनकी रानी ने खेत के अस्थायी विश्राम घर में सीता को जन्म दिया होगा। अतः क्योंकि सीता का जन्म घर से बाहर रहते हुए हुआ, राजा जनक ने उसे अयोनिजा कहा और क्योंकि हल चलाते हुए हुआ, अतः उसका नाम सीता रखा गया।

इसके अतिरिक्त **'उत्तररामचरितम्'** में सीता को **देवयजन संभवे** अर्थात् यज्ञ के साथ उत्पन्न हुई कह कर पुकारा गया है। इसने यह अनुमान लगाना अनुचित न होगा कि सीता का जन्म उस समय हुआ होगा जब राजा जनक किसी यज्ञ विशेष के लिये दीक्षित होंगे। धर्मशास्त्र के नियम के अनुसार यज्ञ में दम्पती यज्ञ की पूर्णाहुति तक यज्ञभूमि परिसर में ही निवास करते हैं। अनेक यज्ञ पक्ष, मास, वर्ष या अनेक वर्ष में सम्पन्न होते हैं। इस प्रकार के दीर्घकालीन यज्ञ सत्र कहलाते हैं। सीता के जन्म से पूर्व राजा जनक ने सम्भवतः किसी ऐसे दीर्घकालीन यज्ञ के लिए दीक्षा ली हुई होगी, जिसमें हल चलाना भी आवश्यक होगा। उसी समय घर से बाहर रहते हुए जन्म होने के कारण सीता जी का नाम सीता रखा गया है और उन्हें अयोनिजा कहा गया। शेष पुनः----

ज्योतिर्मय हो मन विश्रान्त

–स्व० राधेश्याम 'आर्य'

सत्य–धर्म के पावन पथ–
पर, चले हमारा देश।
ऋषि–मुनियों के गूंजे भू पर,
पुनः मधुर उपदेश।
मित्र बनें धरती के सब जन,
सभी दिशाएं मित्र बनें।
हटें दनुजता के जो छाए–
सदियों से हैं मेघ घने।
ज्योतिर्मय हो भू का कण कण,
ज्योतिर्मय हो जन–अन्तर।
ज्योतिर्मय हो आभा युग की,
ज्योतिर्मय हो भू–अम्बर।
जाति–पाँति का भेद मिटे सब,
मिटे मनुजता उत्पीड़न।
ज्ञानालोक धरणि पर फैले,
जन जन में आए नवजीवन।
मोहाक्रान्त मनुज के उर में,
उठे नवलतम उद्‌बोधन।
प्रकृति जयी के गूढ़ रहस्यों–
का हो सुन्दर संशोधन।
नव ज्योति पा ले अंगड़ाई,
मानव जगती का उद्‌भ्रान्त।
'आर्य' बनें सब जगती के जन,
ज्योतिर्मय हो मन विश्रान्त।।

हमारी न सही, इनकी तो मानिये

❒**रामफल सिंह आर्य**, महामंत्री, आर्य प्रति सभा हि० प्र०
मं० नं० 87/एस-3, बी.एस.एल कालोनी सुन्दरनगर, जिला मण्ड़ी, हि०प्र० 175019

अरब में रहने वाले लोग भी सदियों पूर्व से वेद की प्रशंसा के गीत गा कर स्वयं को धन्य मानते थे।

वेद ही संसार के आदि ग्रंथ हैं। परमपिता परमेश्वर ने मानव को उसकी उत्पत्ति के समय ही वेद का ज्ञान प्रदान किया था कि जिससे वह अपने जीवन को सरल, सुखी एवं श्रेष्ठ बना सके। इस बारे में समय-2 पर विद्वानों द्वारा अनेक विचार प्रस्तुत किये जाते रहते हैं। एक समय था जब सम्पूर्ण धरा पर वेदों के अतिरिक्त कोई भी अन्य पुस्तक ईश्वरीय पुस्तक न समझी जाती थी। धरती का प्रत्येक मानव, चाहे वह किसी भी देश का रहने वाला क्यों न हो, कोई भी भाषा क्यों न बोलता हो, वेदों को आदर व श्रद्धा की दृष्टि से देखता था और उन्हे पढ़ने के लिये लालायित रहता था। आर्यावर्त्त ऐसा देश था जहाँ पर वेद का ज्ञान मनुष्य को दिया गया और इनका पठन-पाठन सबसे प्राचीन समय से होता रहा तथा इन पर गम्भीर मनन एवं चिन्तन किया गया। यहाँ से संसार के विभिन्न स्थानों पर वेदों के प्रचारक गये और वेद के ही आदेश, **'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'** के अनुसार पूरी पृथ्वी पर ईश्वरीय सन्देश को सुनाया। विश्व के लगभग प्रत्येक देश में कुछ अवशेष ऐसे मिले हैं जो कि वैदिक सभ्यता का परिचय देते हैं। यहाँ तक कि अरब देशों मे भी वेदो को अत्यंत श्रद्धा व आदर की भावना से देखा जाता था और लोग इसे ईश्वरीय ज्ञान ही मानते थे। वह भी हजरत मोहम्मद के जन्म से बहुत वर्ष पहले जब इस्लाम का कोई अता-पता भी न था।

क्यों चौंक गये ना! परन्तु यह अत्यंत प्रामाणिक जानकारी है जो उनके मान्य ग्रंथ **'सेअरूल ओकुल'** में संचित है। इसका वर्णन सुप्रसिद्ध इतिहासकार श्री पी. एन. ओक ने अपनी पुस्तक **'भारतीय इतिहास की भयंकर भूलें'** के पृष्ठ 347 पर किया है। सेअरूल ओकुल एक प्राचीन अरबी काव्य संग्रह है। इस कविता का रचयिता लबी बिन-ए-अख़्ताब-ए-तुरफा है। यह पैगम्बर मोहम्मद से 2300 वर्ष पूर्व हुआ था। इतने समय पूर्व भी अर्थात् लगभग 1800 वर्ष ई0 पूर्व लबी ने वेदों की अनन्य काव्यमय प्रशंसा की है। इतना ही नही, उसने प्रत्येक वेद का अलग-2 नामोच्चार भी किया है। यह कविता सिद्ध करती है कि वेदों के प्रति अरब लोगों की निष्ठा बहुत गहरी थी। यह भी प्रमाण इससे मिलता है कि आर्यावर्त्तीय उपदेशकों ने कितने परिश्रम से संसार में वैदिक मान्यताओं का प्रचार किया। आईये कविता का आनन्द उठाईये:-

अया मुबारेकल अरज मुशैये नोहा मिनार हिन्दे।
व अरादकल्लाह मज्योनज्जेल जिकरतुन।।१।।
वहालजल्लीयतुन ऐनाने सहबी अरबे अतुन जिकरा।
वहाजेही योनज्जेलुर्रसूल मिनल हिन्दतुन।।२।।
यकूलूनल्लाहः या अहलल अरज आलमीन फुल्लहुम।
फत्तेवेऊ जिकरतुल वेद हुक्कुन मालम योनज्वेलतुन।।३।।
वहोवा आलमुस्साम वल यजुरमिनल्लाहे तनजीलन।
फए नोमा या अरवीयो मुत्तवेयन योवसीरीयोनज़ातुन।।४।।
जइसनैन हुमारिक अतर नासेहीन का-अ-खुबातुन।
व असनात अलाऊढ़न व होवा मश-ए-रतुन।।५।।

(सेअरूल ओकुल पृष्ठ 257)

अर्थात्-

(१) हे भारत की पुण्यभूमि! तू धन्य है, क्योंकि ईश्वर ने तुझे अपने ज्ञान के लिये चुना।

(२) वह ईश्वर का ज्ञान प्रकाश जो प्रकाश स्तम्भों के सदृश सम्पूर्ण जगत् को प्रकाशित करता है, यह भारतवर्ष में ऋषियों द्वारा चार रूप में प्रकट हुआ।

(३) और परमात्मा समस्त संसार के मनुष्यों को आज्ञा देता है कि वेद, जो मेरे ज्ञान हैं, इनके अनुसार आचरण करो।

(४) वे ज्ञान के भण्डार साम और यजुर् हैं जो ईश्वर ने प्रदान किये। इसलिए हे मेरे भाईयो! इनको मानो, क्योंकि ये हमें मोक्ष का मार्ग बतलाते हैं।

(५) और दो उनमें से रिक् अतर (ऋग्वेद और अथर्ववेद)

हैं, जो हमको भ्रातृत्व की शिक्षा देते हैं और जो इनकी शरण में आ गया, वह कभी अन्धकार को प्राप्त नहीं होता।

पाठकगण देखा आपने! अरब में रहने वाले लोग भी सदियों पूर्व से वेद की प्रशंसा के गीत गा कर स्वयं को धन्य मानते थे। श्री पी. एन. ओक अपने उक्त ग्रंथ के पृष्ठ 347 पर पुनः लिखते हैं कि ''यह कविता इस्लाम पूर्व समय के अरेबिया में सर्वोत्तम पुरस्कार विजेता थी, मूल्यवान थी और काबा देवालय के भीतर स्वर्णाक्षरों में उत्कीर्ण होकर टांगी गई थी।'' आश्चर्य है कि उक्त कविता की विद्यमानता में भी पक्षपात से ग्रस्त होकर वेद के स्थान पर कुरआन को ईश्वरीय पुस्तक माना जाने लगा और कुरआन के मानने वालों ने मजहबी उन्माद में आकर तलवार के बल पर अनेक हिन्दुओं का जीवन नष्ट किया। सत्य है कि मजहबी भेदभाव मानव को मानव से अलग करके एक-दूसरे के विरुद्ध लड़ा मारता है अन्यथा वेद का संदेश तो सारी पृथ्वी के मनुष्य को भाईचारे का पाठ पढ़ाता है।

जब तक संसार के मनुष्य वेद की शिक्षा पर चलते रहे, वे सुखी, शान्त एवं समृद्ध रहे और जब अलग-2 मजहबों का प्रचलन हुआ तो एक दूसरे के शत्रु बन गये। क्षुद्र मानवों के द्वारा रचित उन ग्रंथों में वह विशालता कहाँ थी जो कि ईश्वर प्रदत्त वेदों में है। यह भी सत्य है कि अभी भी अनुसन्धान करने से पूरे विश्व के ग्रंथों में बहुत कुछ सामग्री ऐसी मिलने की आशा है जो उक्त उदाहरण की भांति ही कोई न कोई रहस्य खोल देगी। वेद का प्रचार करने वाले विद्वानों एवं उपदेशकों की सेवा में हमारा नम्र निवेदन है कि वे अपने कथनों में इस प्रकार की सामग्री अवश्य रखा करें।

ऐसी दीपमाला मनाओ

❑स्वर्गीय लाला दीवानचन्द जी

राम की विजय धर्म की विजय है। पतिव्रत और पत्नीव्रत धर्म सारे सामाजिक जीवन का आधार है। यह धर्म ही मुख्य धर्म है। रावण ने इस धर्म के मूल पर कुठाराघात करना चाहा। धर्म तो नष्ट नहीं हुआ, पर रावण आप नष्ट हो गया। जब तक यह मानव सृष्टि रहेगी, राम और रावण की कथा भी लोगों की जिह्वा पर रहेगी। लोग राम के पुरुषार्थ, प्रेम और धर्म, श्रद्धा और समर्पण को याद करके अपने आपको पवित्र करेंगे। देवियाँ सीता का स्मरण करके अपने जीवन को पवित्र करेंगी। भाई लक्ष्मण और भरत के त्याग का ध्यान करके अपने कर्तव्य को समझेंगे।

कुछ भी और सुना! कहते हैं कि राम जी सीता और लक्ष्मण के साथ अयोध्या में आ रहे हैं। अध्योया के रहने वाले वर्षों के बिछुड़े हुए प्यारे राम को देखेंगे। --चलो राम जी के देखने के योग्य अयोध्या को बनावें। प्रत्येक अयोध्या वासी से प्रेरणा करें कि वह राम का स्वागत करने की तैयारी करे। घरों को साफ रखें। अंदर-बाहर से लीपें। कोठड़ियों के कोनों से कूड़ा-कर्कट निकालकर बाहर फैंक दें। घर का प्रत्येक भाग और कोना पवित्रता का स्वरूप बन जाये। राम की आंखें किसी अपवित्र स्थान पर पड़ ही न सकें। राम के आने से नगर में चारों और दीपमाला हो जाये। राम जी की आंखें न अपवित्रता पर पड़ सकें और न अंधेरे को देख पायें।

राम की अयोध्या कौन सी अयोध्या है। संयुक्त प्रान्त की एक बस्ती? नहीं, नहीं--! आर्यावर्त का प्रत्येक भाग उनका निवास स्थान होगा। प्रत्येक आर्य हृदय में उनकी जगह होगी। सारा देश ही उनकी अयोध्या है।

अगणित बार दीपमालिका आयी। लोगों ने राम की याद में घरों को शुद्ध किया और प्रकाश किया। कई राजा महाराजा आये और चले गये, परन्तु जिस श्रद्धा, प्रेम और उत्साह के साथ करोड़ों आर्य 'बोले राम चन्द्र महाराज की जय' के नाद लगाते हैं, वे किसी ओर राजा के साथ न लगाते हैं और न लगा सकते हैं। सारे आर्य हृदयों पर राज्य अब भी राजा रामचन्द्र जी का है और प्रत्येक वर्ष दीवाली इस सत्य का प्रकाश करती है।

परन्तु सम्वत् १९३९ विक्रमी की दीवाली कैसी दीवाली थी? भारत के कोने-कोने में दीपक प्रकाशित हो रहे थे और भारत का सर्वोत्तम दीपक बुझ रहा था। स्वामी दयानन्द का महान आत्मा अपने शरीर को त्याग रहा था। जिज्ञासु उनके पास पहुंचा। महाराज! चारों ओर राम के आने की प्रसन्नता में रोशनी हो रही है और आप हमें दुःख और शोक के सागर में डुबो रहे हैं। ऋषि ने कहा कि जो मुझे कहना था कह दिया। मैं यही संदेश देने आया था। हृदय के अंधकारमय कोने में जो स्वार्थ, द्वेष, नास्तिकता और विषय भोग के भाव पड़े हैं उन्हें वहां से कुरेदकर, छीलकर निकालो और बाहर फैंक दो। घर के प्रत्येक कोने को प्रकाशित करो और इसके साथ ही अपने मस्तिष्क के प्रत्येक भाग में भी ज्ञान का प्रकाश डाल दो। अज्ञान और अविद्या का अंधकार किसी कोने में न रहे। बाह्य जगत की दीवाली के साथ आत्मा की दीपमाला भी मनाओ।

हृदय की पवित्रता और मस्तिष्क का प्रकाश ये दो वस्तुए हैं जो गिरे हुए मनुष्यों को खड़ा करती हैं और खड़े हुओं को उन्नति की ओर ले जाती हैं। यही दो वस्तुए हैं जो जातियों को उन्नति के शिखर पर पहुंचा देती हैं। ऐसी दीपमाला मनाओ जिससे दिलों में पाप की मैल न रहे और बुद्धि में अज्ञान का लेश न रहे।

आर्यसमाज, गाँधी, गोडसे और हिंसा

गाँधी ने सदा उन हत्यारों का ही साथ दिया, जिन्होंने गाँधी के काल में आर्यसमाज के विद्वानों, प्रचारकों और संन्यासियों पर हमले किए, हत्याएँ कीं। तब गाँधी वध करने वाले गोडसे के साथ गाँधी की नीति का पालन क्यों नहीं होना चाहिए ?

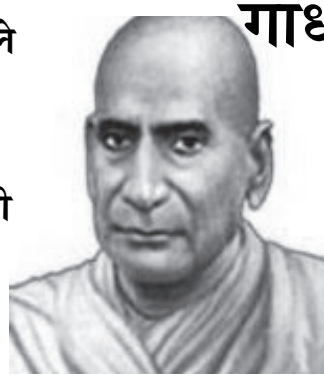

डॉ. कविता वाचक्नवी
kavita.vachaknavee@gmail.com

1. एक व्यक्ति महर्षि दयानन्द को जहर देता है और महर्षि उसे लेशमात्र भी दण्डित करने की भावना के बिना मृत्युशय्या पर अन्तिम साँसें ले निर्वाण प्राप्त करते हैं। आर्यसमाज के इतिहास में किसी ने उस व्यक्ति से बदले की भावना से प्रेरित हो, उसके विरुद्ध साम-दाम-दण्ड-भेद आदि कुछ भी अपनाकर घृणा का विस्तार और वमन नहीं किया, न उसे दण्डित किया।

2. एक व्यक्ति पण्डित लेखराम की हत्या कर देता है और आर्यसमाज के इतिहास में किसी ने उस व्यक्ति से बदले की भावना से प्रेरित हो, उसके विरुद्ध साम-दाम-दण्ड-भेद आदि कुछ भी अपना कर घृणा का विस्तार नहीं किया, न उसे कोई दण्ड दिया।

3. अपनी 'महात्मा' की उपाधि गाँधी को देने वाले स्वामी श्रद्धानन्द अपने शुद्धिकरण अभियान में एक युवती (अभिनेत्री तबस्सुम की माँ) द्वारा शुद्धिकरण के आग्रह पर उसकी शुद्धि करते हैं और प्रतिक्रिया के उबाल से त्रस्त हो गाँधी स्वामीजी के अभियान के विरोध में बयान देते हैं और फिर एक व्यक्ति स्वामीजी की हत्या कर देता है। आर्यसमाज के इतिहास में किसी ने उस व्यक्ति से बदले की भावना से प्रेरित हो, उसके विरुद्ध साम-दाम-दण्ड-भेद आदि कुछ भी अपना कर घृणा का विस्तार नहीं किया, न उसे कोई दण्ड दिया। पुलिस केस से बचाने की भावना से गाँधीजी उस हत्यारे को 'मेरा भाई' कहते हैं और उसे निर्दोष कह कर माफ करने की सार्वजनिक अपील निकालते/करते हैं।

4. 1920 में 'कृष्ण तेरी गीता जलानी पड़ेगी' और 'बीसवीं सदी का महर्षि' नाम से कृष्ण और महर्षि दयानन्द पर कीचड़ पोतने के लिए लिखी गई दो पुस्तकों के उत्तर में लिखी गई पुस्तक 'रंगीला रसूल' (लेखक पंडित चमूपति) को छापने के अपराध में एक व्यक्ति- प्रकाशक राजपाल पर हमला कर देता है, जिसमें राजपाल (राजपाल एण्ड सञ्ज प्रकाशन के संस्थापक) बच जाते हैं और वह हत्यारा फिर उन पर हमला करने के लिए गलती से किसी और पर हमला कर देता है। आर्यसमाज के इतिहास में किसी ने उस व्यक्ति से बदले की भावना से प्रेरित हो, उसके विरुद्ध साम-दाम-दण्ड-भेद आदि कुछ भी अपना कर घृणा का विस्तार नहीं किया, न दण्ड दिया। तब भी पुलिस केस से बचाने की भावना से गाँधी जी बयान देते हैं- 'एक साधारण तुच्छ पुस्तक-विक्रेता ने कुछ पैसे बनाने के लिए इस्लाम के पैगम्बर की निन्दा की है, इसका प्रतिकार होना चाहिये।' अन्ततः महाशय राजपाल की हत्या कर दी गई।

ऐसे कम से कम पचास किस्से और हैं, जिनमें आर्यसमाज के सन्यासियों, प्रचारकों, विद्वानों आदि की हत्या कर दी गई और आर्यसमाज के इतिहास में किसी ने हत्यारों से बदले की भावना से प्रेरित हो, उनके विरुद्ध साम-दाम-दण्ड-भेद आदि कुछ भी अपना कर घृणा का विस्तार नहीं किया, न दण्ड दिया। इस देश के इतिहास ने कभी उनमें से एक को भी युगों तक कलंकित कर इतिहास का सबसे घृणित व्यक्ति नहीं कहा।

समग्र एवं सर्वश्रेष्ठ साहित्यिक अवदान हेतु हरिवंश राय बच्चन के शताब्दी वर्ष पर स्थापित 'हरिवंश राय बच्चन लेखन सम्मान एवं पुरस्कार' (2014) डॉ. कविता वाचक्नवी को देना घोषित हुआ है। समारोह 5 दिसम्बर को इण्डिया हाऊस, लन्दन में आयोजित होगा। ध्यातव्य है कि भारतीय उच्चायोग द्वारा हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ अवदान हेतु वर्ष 2012 में 'आचार्य महावीर प्रसाद पत्रकारिता सम्मान' भी डॉ. कविता वाचक्नवी को प्रदान किया गया था।

इसके बरक्स गाँधी ने सदा उन हत्यारों का ही साथ दिया, जिन्होंने गाँधी के काल में आर्यसमाज के विद्वानों, प्रचारकों और सन्यासियों पर हमले किए, हत्याएँ कीं। तब गाँधी वध करने वाले गोडसे के साथ गाँधी की नीति का पालन क्यों नहीं होना चाहिए? क्यों इस देश की सरकारें और सरकार के क्रीतदासों ने एक षड्यन्त्रपूर्वक गोडसे को इतिहास का सबसे घृणित व्यक्ति सिद्ध किया?
इसका उत्तर बड़ा स्पष्ट है।

गाँधी के प्रति विभाजन के साथ ही देश की जनता में बहुत घृणा का संचार हो गया था। विशेषत: सीमावर्ती उन अंचलों व जनता में- जिन्होंने अपने परिवार के लोगों के लहू और परिवार की लड़कियों व बेटियों की अस्मत व जीवन के साथ ही साथ चल अचल सब कुछ गंवा कर विभाजन को झेला था। अविभाजित भारत के लाहौर में रहने वाले लोगों के परिवार गाँधी के इस वचन/शपथ/कथन पर अन्त तक इत्मिनान से वहाँ डटे रहे कि 'पाकिस्तान मेरी लाश पर बनेगा'। सबको भरोसा था कि गाँधी के इतने बड़े कथन का वास्तव में कुछ अभिप्राय है। उन सब लोगों को गाँधी पर स्वयं से अधिक भरोसा था, और वे आँख बंद कर उस भरोसे पर निश्चिंत बैठे थे। फिर पाकिस्तान बना और गाँधी की लाश पर तो नहीं बना, बल्कि हजारों लाखों पंजाबियों/सिंधियों की लाशों पर बना जो गाँधी के भरोसे बैठे थे। केवल लाशों पर ही नहीं, बल्कि सर्वस्व उजाड़ कर बना। महिलाएँ बलत्कृत हुईं, सदा के लिए हथिया ली गईं। लोगों में भगतसिंह त्रिमूर्ति (भगत, राजगुरु व सुखदेव) के लिए गाँधी का हाथ झाड़ लेना भी असह्य था। उस बात ने भी गांधी के प्रति घृणा का असह्य कारण दिया। भगतसिंह के न रहने पर माता विद्यावती सारे पंजाब के सामने थीं ही, परम पूज्या थीं वे, राष्ट्रमाता, भारतमाता थीं। उनकी उजड़ी कोख सबको सामने दिखाई दे रही थी, इस प्रकरण ने भी कष्टों में में घी का काम किया। जिन्होंने वे दारुण दहला देने वाले कष्ट स्वयं नहीं सहन किए वे ही कमरों में बैठे गाँधी को महान घोषित करते रहे, क्योंकि ऐसा करना ही उनके राजनैतिक हित में था। ताकि गाँधी को महान सिद्ध कर गाँधी के निकट के लोग देश के शीर्ष पर बने रह सकें और गाँधी ने जिन लोगों का साथ नहीं दिया वे लोग इतिहास में और राजनीति में कमतर सिद्ध होते रहें और इस तरह गाँधी के निकटवर्तियों का शासन पर कब्जा बना रह सके। गाँधी की महानता के पीछे उन्हें महान सिद्ध करने की यही राजनीति काम कर रही थी।

जैसा कि मैंने पहले भी लिखा था कि मैं यहाँ ब्रिटेन में पिछली पीढ़ी के कुछ इतिहासकारों से मिली तो उन्होंने कहा कि गाँधी क्योंकि भारतीयों के सबसे कमजोर प्रतिनिधि थे जिनके माध्यम से भारतीय नेताओं और जनता पर मनमानी चलाई जा सकती थी और समझौतों के लिए बाध्य किया जा सकता था, इसलिए अंग्रेजों ने जानबूझ कर गाँधी का इस्तेमाल अपने लाभ के लिए करने के प्रयोजन से गाँधी को प्रमुखता दी और उन्हें भारतीयों के प्रतिनिधि के रूप में वरीयता दी। अन्यथा उन्हें गर्मदल के किसी वीर को प्रतिनिधि स्वीकारना पड़ता तो अंग्रेज अपनी मंशाओं और मंसूबों में कभी कामयाब न होते और न भारत का विभाजन कर पाते। गाँधी उनके लिए एक कमजोर चरित्र का मोहरा थे, जिसके माध्यम से जनता और नेताओं पर भावनात्मक दबाव बनाया जाता रहा और गाँधी अंग्रेजों के कट्टर दुश्मन भी नहीं थे।

इन सब घटनाओं के आलोक में गोडसे को अत्यन्त घृणित व्यक्ति सिद्ध करने वाले गाँधी के प्रिय परिवार की कुटिल चालों का अर्थ अधिक स्पष्ट हो सकता है। अन्यथा

ऐसा कोई कारण भारतीय समाज के पास नहीं है कि घृणित हत्यारों तक को उदारता से क्षमा कर देने वाला समाज गोडसे जैसे देशप्रेमी के हाथों आवेग में हुई गाँधी की हत्या के लिए उसे संसार का जघन्यतम अपराधी मानता रहे। गोडसे द्वारा गोली चलाना वैसा ही था, जैसे ऊधमसिंह द्वारा कैक्स्टन हाल, लन्दन में जलियाँवाला बाग का बदला लेने के लिए तत्कालीन गवर्नर का वध या किसी भी अन्य देशभक्त बलिदानी द्वारा राष्ट्र का अहित करने वाले का वध। अन्तर केवल इतना ही है कि गाँधी भारतीय मूल के थे और अंग्रेज विदेशी।

आप विचार कर देखिए कि यदि गाँधी का हत्यारा कोई हिन्दू न होकर कोई मुस्लिम या ईसाई या अंग्रेज होता तो क्या तब भी भारत की राजनीति द्वारा पाले गए इतिहासकारों द्वारा उसके प्रति उतनी ही घृणा फैलाई जा सकती जितनी गोडसे के विरुद्ध फैलाई गई है? कदापि नहीं। तब गाँधी की 'माफ करो' की नीति अपना कर या 'हिंसक तो हिंसक है ही' कह कर उसे चुपचाप शोकपूर्वक स्वीकार कर लिया गया होता। गोडसे के प्रकरण में गाँधी की नीति कहाँ गई?

यदि हत्या इतना ही बड़ा अपराध है तो केवल गोडसे द्वारा की गई हत्या ही क्यों अपराध है? तब तो आप अपने देश के सारे बलिदानियों द्वारा ब्रिटिश शासकों की हत्याओं को भी अपराध सिद्ध कीजिए या अन्य मतावलम्बियों द्वारा की गई संन्यासियों, प्रचारकों, विद्वानों की हत्या को भी अपराध सिद्ध कर उनके विरुद्ध विषवमन कीजिए। यदि ऐसा नहीं कर सकते, यह कहकर कि हत्या करने वाले का उद्देश्य देखा जाता है, जैसे ऊधमसिंह द्वारा बंदूक उठाकर की गई हत्या का उद्देश्य पवित्र था, इसलिए ऊधमसिंह हमारे पूज्य हैं, तो उसी प्रकार गोडसे द्वारा की गई हत्या का भी उद्देश्य ही क्यों नहीं देखा जाता?

जिन्होंने घृणा के उद्देश्य से स्वामी श्रद्धानन्द जी सहित बीसियों पूज्यों की हत्या की, उनका तो उद्देश्य भी गलत था और कार्य भी, किन्तु गाँधी ने स्वयं दूषित उद्देश्य, हिंसा व गलत कार्य करने वालों को सिर पर बिठाया और उन्हें माफ करने की अपीलें कीं। स्वामी श्रद्धानन्द जी, राजपाल जी आदि की हत्या तक में भी गाँधी संदिग्ध ठहरते हैं। ऐसे में गाँधीभक्तों को अपने स्वार्थों व राजनीति पर पुनर्विचार करना होगा और देशहित की भावना वाले गोडसे के विरुद्ध विषवमन पूर्णत: बन्द करना होगा और इतिहास में उन्हें न्याय दिलवाना होगा।

दृढ़ संकल्प और परिश्रम का चमत्कार : सुरक्षा गार्ड बना आई ए एस

14 वर्षों से सिक्युरिटी गार्ड की नौकरी कर रहे एक युवक ने अपने दूसरे प्रयास में भारतीय प्रशासनिक सेवा की परीक्षा पास कर ली। युवक शादीशुदा और बाल-बच्चेदार है। उड़ीसा के रहने वाले इस युवक का नाम जोति रंजन बागरती है। बागरती ने उस परीक्षा को पास कर दिखाया है जिसे पास करने के लिए विद्यार्थी दिल्ली, मुंबई, पटना जैसे नगरों में अपनी जिंदगी के 5 से 10 वर्ष झोंक देते हैं। दस वर्ष पहले अपने पहले प्रयास में असफल होने के बाद वह पिछले दो वर्षों से इस परीक्षा की तैयारी कर रहा था। अभी मदुरै में उसका प्रशिक्षण चल रहा है।

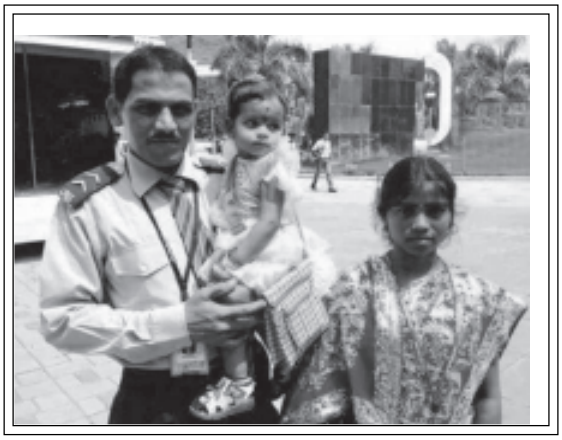

भारत में कई ऐसे व्यक्ति हुए हैं जिन्होंने अभावों से जूझते हुए असाधारण सफलता हासिल की है। इससे पहले भी अभावों में जूझते हुए रिक्शा चालक के बेटे गोविंद जायसवाल ने भारतीय प्रशासनिक सेवा की परीक्षा पास की थी।

जम्मू-कश्मीर के सोपोर क्षेत्र के एक दुकानदार के बेटे बशीर अहमद भट्ट भी सिविल सेवा परीक्षा पास कर सुर्खियों में आए थे। इन गुदड़ी के लालों की जीवटता से सिविल सेवा परीक्षा की तैयारी कर रहे युवाओं में ऊर्जा और उमंग का संचार होता है। इससे समाज में सकारात्मक संदेश जाता है जिससे कई लोगों को प्रेरणा मिलती है।

वैदिक शिक्षा व्यवस्था तथा शूद्र

❑**संजय कुमार,** 1904 GF सैक्टर-8 कुरुक्षेत्र-136118

शूद्र को शिक्षा का अधिकार

1- हे ईश्वर, मुझको परोपकारी विद्वान् ब्राह्मणों में प्रिय करो, मुझको शासक वर्ग में प्रिय करो, शूद्र और वैश्य में प्रिय करो, सब देखने वालों में प्रिय करो। (अथर्ववेद 19/62/1)

2- हे ईश्वर, हमारे ब्राह्मणों में कान्ति, तेज, ओज, सामर्थ्य भर दो, हमारे शासक वर्ग (क्षत्रियों) को तेज, ओज, कान्ति युक्त कर दो, वैश्यों तथा शूद्रों को कान्ति, तेज, ओज सामर्थ्य युक्त कर दो। मेरे भीतर भी विशेष कान्ति, तेज, ओज भर दो। (यजुर्वेद 18/48)

3. आयुर्वेद के 2 प्राचीन ग्रंथ सुश्रुत संहिता में एक प्रसंग (सूत्र स्थान अध्याय 2) में महर्षि दिवोदास धन्वन्तरी जी कहते हैं-

'ब्राह्मण 3 वर्णों का उपनयन कर सकता है, क्षत्रिय 2 वर्णों का उपनयन कर सकता है, वैश्य केवल वैश्य का ही उपनयन कर सकता है। उत्तम कुल व गुण सम्पन्न शूद्र का भी उपनयन करे, परंतु वेद न पढ़ावे।'

व्याख्या : उपनयन= जनेऊ पहनाना। प्राचीन काल मे जनेऊ विद्या का चिह्न था। पहला उपनयन बचपन में होता था जो गुरुकुल मे प्राथमिक अध्ययन के लिए जाने पर होता था। सामान्य अध्ययन के बाद आयुर्वेद पढ़ने से पहले आयुर्वेद पढ़ाने वाला आचार्य दोबारा उपनयन करता था, जैसे आजकल 12वीं पास करने पर महाविद्यालय में जाने पर एडमिशन की पूरी प्रक्रिया दोबारा से पूरी करनी होती है। आयुर्वेद पढ़ने से पहले अपनी प्रारम्भिक शिक्षा पूरी करनी आवश्यक थी, जैसे आजकल MBBS से पहले 12वीं करनी पड़ती है। अत: जो गुरुकुल में प्रारम्भिक शिक्षा पूरी कर चुका है, उसको ही आयुर्वेद पढ़ाने के लिए आयुर्वेद का आचार्य फिर से उपनयन करता था। अब जैसे 12वीं मे बाओलोजी पढ़ने वाला ही MBBS में प्रवेश पा सकता है, इसी प्रकार जो शिक्षा ले चुका वह ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य आयुर्वेद पढ़ सकता है। आप कहेंगे कि यहाँ पर शूद्र की गिनती अलग से क्यों की गई है? जो गुरुकुल मे पढ़ लिया वह शूद्र नहीं रहेगा। वह तो ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य बन जाएगा। परंतु इसका अर्थ यह नहीं है जो योग्य, गुणवान् शूद्र विद्यार्थी किसी कारण से आरंभिक शिक्षा पूरी नहीं कर पाया उसे आयुर्वेद पढ़ने से वंचित कर दिया जाए। ऋषि उसे भी जनेऊ देकर आयुर्वेद पढ़ाने का विधान करते हैं। उसे वेद पढ़ाने का निषेध क्यों? क्योंकि वेद बाकी से अधिक कठिन है। यदि वह पढ़ाने पर योग्य पाया जाता है तो उसे वेद पढ़ा दिया जाएगा। क्या आज के दिन कोई इस तरह की व्यवस्था है जिसमें अनपढ़/कम पढ़े लिखे को योग्यता के आधार पर MBBS में प्रवेश दिया जा सकता है?

4. एक दूसरा प्राचीन ग्रंथ है- आपस्तम्ब धर्म सूत्र। उसमें लिखा है- धर्म आचरण से निम्न वर्ण अपने से ऊंचे वर्ण को प्राप्त कर लेता है, अपने जन्म के वर्ण को छोड़ कर। अधर्म आचरण से उच्च वर्ण अपने से नीचे वाले वर्ण में चला जाता है, अपने जन्म के वर्ण को छोड़कर। इसी ग्रंथ में शिष्य द्वारा गुरु को प्रणाम करने की विधि लिखी है। वहाँ लिखा है- ब्राह्मण विद्यार्थी अपने दाहिने हाथ की हथेली को कान तक ले जाकर गुरु को प्रणाम करे। क्षत्रिय विद्यार्थी अपनी छाती तक हाथ को ले जाकर प्रणाम करे। वैश्य विद्यार्थी हाथ को छाती के निचले हिस्से तक (जहाँ छाती व पेट मिलते हैं) ले जाकर प्रणाम करे। शूद्र विद्यार्थी प्रांजली से (दोनों हाथ जोड़ कर) प्रणाम करे। शायद यह पढ़ कर कहें कि यह भेदभाव क्यों! इसका कारण है कि जैसे घर के उस सदस्य पर अधिक ध्यान दिया जाता है जो शिशु हो या रोगी हो। जैसे विचारशील अध्यापक कमजोर विद्यार्थी को कक्षा में आगे बैठाता है। उसी तरह आचार्य शूद्र का ब्राह्मण से अधिक ध्यान रखे।

5 एक प्राचीन वैदिक ग्रंथ है कौषितिक ब्राह्मण में व्यवस्था है कि यदि 8 साल से बड़ा कोई बच्चा गुरुकुल मे न जाकर घर में पाया जाए तो उसके माता पिता को दंड दिया जाए।

शूद्र भी ब्राह्मण बन सकता है

1. महर्षि मनु लिखते हैं= शूद्र ब्राह्मण बन सकता है और ब्राह्मण शूद्र। इसी तरह से वैश्य व क्षत्रिय को भी जानो।

2. आपस्तम्ब धर्म सूत्र- धर्म आचरण से निम्न वर्ण अपने से ऊंचे वर्ण को प्राप्त कर लेता है अपने जन्म के वर्ण को छोड़ कर । अधर्म आचरण से उच्च वर्ण अपने से नीचे वाले वर्ण में चला जाता है, अपने जन्म के वर्ण को छोड़ कर।

3. एतेरेय ब्राह्मण में लिखा है- ऋषि लोग सरस्वती के तट पर यज्ञ करते थे। उन्होंने कवष ऐलूष को यज्ञ से बाहर निकाल दिया। क्योंकि एक तो वह दासी पुत्र दूसरा वह जुआरी था। वह आचरणों से बहुत ही भ्रष्ट था। पश्चात् इसने अध्ययन रूप महाव्रत को धारण किया और सम्पूर्ण ऋग्वेद का अध्ययन किया। उसे वेद के नवीन विषय भाषित होने लगे। यह देख कर ऋषियों ने उसे बुलवाया, अपना आचार्य बनाकर यज्ञ करवाया। (यज्ञ का आचार्य बनाना विशेष सम्मान होता था, जो बहुत बड़े विद्वान् व सदाचारी को ही बनाया जाता था तथा आज भी बनाया जाता है।)

4. कुछ अन्य उदाहरण-

क- हरिवंश पुराण (11) नाभागारिष्ट के 2 पुत्र वैश्य से ब्राह्मण हुए।

ख- भागवत पुराण (9/17/2) वितथ के 5 पुत्र हुए= सुहोत्र, सुहोता, गय, गर्ग, कपिल। सुहोत्र के 2 पुत्र- महासत्व काशक और गृत्समति। गृत्समति के संतान ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तीनों हुए।

ग- महाभारत मे वीतहव्य क्षत्रिय से ब्राह्मण हुए।

घ- वायु पुराण, विष्णु पुराण, हरिवंश पुराण तीनों में लिखा है कि शौनक के पुत्र चारों वर्णों वाले ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र हुए।

वैदिक व्यवस्था में सम्मान धन या पद से नहीं आचरण से

1. सुश्रुत संहिता सूत्र स्थान अध्याय 2 में महर्षि अपने शिष्य को जनेऊ देते समय उपदेश देते है-

ब्राह्मण, गुरु, दरिद्र, मित्र, संन्यासी, पास में नम्रतापूर्वक आए, सज्जन, अनाथ, दूर से आए सज्जनों की चिकित्सा स्वजनों (अपने परिवार के सदस्य) की भांति अपनी औषधियों से करनी चाहिए। यह करना साधु (श्रेष्ठ) है। व्याध, चिड़िमार, पतित आचरण वाले पापी की चिकित्सा धन का लाभ होने पर भी नहीं करनी चाहिए। ऐसा करने से विद्या सफल होती है, मित्र, यश, धर्म, अर्थ और काम की प्राप्ति होती है। ऐसा ही विवरण चरक संहिता में मिलता है। परंतु बौद्ध मत को मानने वाले जीवक (काश्यप संहिता), वाग्भट्ट (अष्टांग हृदय तथा अष्टांग संग्रह) में नहीं मिलता।

क्या आज का चिकित्सक यह कर्त्तव्य निभाता है?

छोटा सा इक, दीप जलायें।

❒डॉ० संतोष गौड़ राष्ट्रप्रेमी

छोटा सा इक, दीप जलायें। मानव-मन को पुनः मिलायें।।
अंधकार से ढका विश्व है, दीप से दीप जलाते जायें।

चौराहे पर रक्त बह रहा,
नारी नर को कोस रही है,
नर नारी का खून पी रहा,
लक्ष्मीजी चीत्कार रही हैं।

राम का हम हैं, स्वागत करते
रावण मन के अन्दर बस रहा।
लक्ष्मी को है मारा कोख में
अन्दर लक्ष्मी पूजन हो रहा।

आओ शान्ति सन्देश जगायें
हर दिल प्रेम का दीप जलायें।
बाहर दीप जले न जले,
सबके अन्दर दीप जलायें।

विद्वता बहुत हांकी है अब तक,
पोथी बहुत बांची हैं अब तक,
हर दिल से आतंक मिटायें,
छोटा सा इक, दीप जलायें।

-जवाहर नवोदय विद्यालय, खुंगा-कोठी, जींद (हरियाणा) -१२६१११० चलवार्ता ९९९६३८८१६९

संस्कारविहीन शिक्षा बढ़ते अपराध

सामाजिक चिन्तन

❑नरेंद्र आहूजा विवेक
602, जी एच 53, सै. 20 पंचकूला
मो. 09467608686

देश में निरंतर बढ़ते अपराधों, विशेष रूप से अपनी आधी आबादी पर हो रहे बलात्कार जैसे जघन्य अत्याचारों को देखते हुए इसके कारणों और दूरगामी समाधानों पर जब हम विचार करते हैं तो देश की वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में कमियाँ और दोष स्पष्ट दिखाई देते हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत देश के नीति नियंताओं ने इस प्रचलित शिक्षा प्रणाली को चुन लिया। इस शिक्षा व्यवस्था को ब्रिटिश गुलामी के दिनों में लार्ड मैकाले द्वारा इस देश को सदा सर्वदा के लिए मानसिक रूप से गुलाम बनाए रखने के लिए लागू किया गया था। लार्ड मैकाले ने इस शिक्षा प्रणाली को ब्रिटिश साम्राज्य की नींव मजबूत करने के उद्देश्य से इस सोच के साथ थोंपा था कि हम इस देश की भावी पीढ़ी को उसकी संस्कृति की जड़ों से काट देंगे। परन्तु ना जाने क्यों? किन कारणों से स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत देश के नीति नियंताओं ने गुलामी की मानसिकता की प्रतीक मैकाले की शिक्षा प्रणाली को अपनी भावी पीढ़ी के निर्माण के लिए अपना लिया, जिसके दुष्परिणाम हम अपने समाज की वर्तमान अवस्था में भुगत रहे हैं।

मैकाले की इस शिक्षा प्रणाली में तथाकथित विकास के नाम पर विनाश की ओर धकेलती इस शिक्षा में संस्कारों, धर्म शिक्षा आदि का कोई स्थान नहीं था। यह शिक्षा प्रणाली केवल अंग्रेजों की सेवा करने के लिए क्लर्क और बाबू बनाने के लिए थी। इस शिक्षा प्रणाली में वर्तमान समय में भी हम अच्छे डाक्टर, इंजीनियर, मैनेजर आदि तो बना सकते हैं, लेकिन इसमें संस्कार देने की कोई व्यवस्था न होने के कारण इन डाक्टरों, इंजीनियरों और मैनेजरों को हम एक अच्छा संवेदनशील मनुष्य बना पाने में पूरी तरह नाकाम हैं।

यदि एक अच्छा डाक्टर एक अच्छा इंसान नहीं है तो ईश्वर का रूप समझा जाने वाला डॉक्टर सेवा की भावना से किए जाने वाले कार्य को धन कमाने का व्यवसाय बना लेता है और शायद तभी किडनी चोरी, कन्याभ्रूण हत्या, मां के गर्भ में लिंग परीक्षण, दवाइयों और जांच में कमीशनखोरी जैसी घटनायें सामने आती हैं और पूरे चिकित्सक समाज को शर्मिंदगी झेलनी पड़ती है। कमोबेश यही स्थिति इस शिक्षा प्रणाली से उत्पन्न प्रत्येक प्रकार के व्यवसायी की हो जाती है।

इसके समाधान पर चिंतन करते समय हम पाते हैं कि स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत उस समय तीन प्रकार की शिक्षा प्रणालियाँ हमारे देश में उपलब्ध थीं। प्रथम प्राचीनतम गुरुकुलीय शिक्षा व्यवस्था जिसमें शिक्षार्थी ब्रह्मचारी अपने माता-पिता का लाड़-दुलार छोड़कर आचार्य के कुल में रहकर शिक्षा ग्रहण करते हुए नया जन्म पाते थे। गुरुकुलीय शिक्षा व्यवस्था में बिना किसी जाति, वर्ण या वर्गभेद के सभी ब्रह्मचारी एक साथ आचार्य की व्यवस्था के अन्तर्गत रहते हुए जीवन की शिक्षा= संस्कार प्राप्त करते थे। यह गुरुकुलीय शिक्षा व्यवस्था पहली बार महाभारत काल में भंग हुई जब राजा धृतराष्ट्र ने पुत्रों के मोह में अंधे होकर गुरु द्रोण को राज्य व्यवस्था के अन्तर्गत रहकर दुर्योधन आदि समस्त कौरवों को शिक्षा देने के लिए विवश कर दिया। तब शायद पहली बार दुर्योधन आदि को शिक्षा प्राप्त करते समय यह लगा कि हमारा आचार्य तो हमारे पिता की राज्य व्यवस्था के आधीन एक वित्तपोषित कर्मचारी है। अतएव उनके मन में कभी भी आचार्य के प्रति आदर का भाव नहीं रहा और उसी विद्यार्थी काल में आया जिद, उद्दंडता और बड़ों के प्रति अनादर का भाव आगे चलकर

महाभारत का कारण बना।

उस समय इस गुरुकुलीय शिक्षा को पुनर्जीवित करने के लिए स्वामी श्रद्धानंद ने शिक्षा यज्ञ में अपना सर्वस्व आहूत करते हुए सफलता पूर्वक हरिद्वार, इन्द्रप्रस्थ, मटिण्डु आदि स्थानों पर गुरुकुल स्थापित किए और इतिहास साक्षी है कि इन गुरुकुलों ने शिक्षा संस्कार देकर स्वतंत्रता संग्राम में अपने प्राणों की आहुति देने वाले कितने क्रान्तिकारी तैयार किए। लेकिन इस गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली को उस समय के नेताओं के पुरानी धार्मिक कट्टरता वाली और प्रगति विरोधी मानकर दूसरी शिक्षा प्रणाली को अपनाया, जो शायद समय के अनुकूल थी। वह थी नवीन और प्राचीन को जोड़कर बनाई गई, एक अनूठे आंदोलन के रूप में चलाई गई- दयानन्द एंग्लो वैदिक शिक्षा व्यवस्था, जिसे श्वेतवस्त्रधारी जीवन समर्पित करने वाले तपस्वी महात्मा हंसराज ने स्थापित किया। इसमें आधुनिकतम शिक्षा के साथ-साथ महर्षि देव दयानन्द द्वारा दिए गए सत्य वैदिक आर्य सिद्धांतों से भी छात्रों का परिचय करवाया जाता था। परन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत शायद मानसिक गुलामी से पूरी तरह मुक्त न हो पाने के कारण उस समय के नेताओं ने गुलामी की प्रतीक मैकाले की पद्धति को अपना लिया।

बच्चों के मन कोमल, संवेदनशील, कच्ची उर्वर मिट्टी की तरह होते हैं। उनमें जैसे बीज बो दिए जायें, बड़े होकर वैसे ही बन जाते हैं। आज की शिक्षा व्यवस्था द्वारा हमने बच्चों को केवल पाश्चात्य भोगवाद की प्रेरणा दी और किसी भी प्रकार के कोई संस्कार नहीं दिए। आज वही पीढ़ी युवा अवस्था में संस्कार विहीन होकर अपराधों की तरफ विशेष रूप से भोगवाद में फंसकर, नारी को भोग की वस्तु मानकर, बलात्कार सरीखे अत्याचार कर रही है। हम बड़ी-बड़ी बहस करते हैं और कानून व्यवस्था के लिए एक दूसरे पर दोषारोपण करते हुए राजनीति करते हैं, लेकिन हमारा ध्यान इस बीमारी के मूल- यानि दोषी शिक्षा व्यवस्था पर नहीं जाता बल्कि उसका तो हम और अधिक व्यवसायी करण करते जा रहे हैं। हम आज अपने बच्चों को बड़े-बड़े डोनेशन देकर उच्च शिक्षा इसलिए दिलवाते हैं कि वह बड़ा होकर किसी एम०एन०सी० में मोटा पैकेज लेगा। आज हम एक व्यापारी की तरह बच्चों की शिक्षा में व्यवसाय की तरह इन्वेस्ट करते हैं और फिर रिटर्न की आशा करते हैं। हमने खुद भी कभी बच्चों को शिक्षा में संस्कार देने का प्रयास नहीं किया।

अब भी यदि हम जाग जायें और इन सभी बुराइयों की जड़ वर्तमान शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन करते हुए यदि नैतिक एवं धर्म शिक्षा को भी शामिल कर लें तो निश्चित रूप से बच्चों को संस्कारवान बना पायेंगे और यही बच्चे कल के अच्छे आदर्श नागरिक बनकर राष्ट्र की मजबूत बुलंद इमारत का आधार बनेंगे। जब हमारे नागरिक संस्कारवान् और संभ्रांत होंगे तो अपराध स्वतः कम हो जायेंगे और फिर नारी पर अत्याचार स्वतः समाप्त हो जायेंगे। कहा भी जाता है यदि पहले सावधानी बरती जाये और बीमारी पैदा होने वाले कारणों को समाप्त कर दिया जाये तो निश्चित रूप से वह बीमारी नहीं होगी।

विवेक के दोहे

❑नरेंद्र आहूजा विवेक

जो खुद को जाने नहीं, वह नकली इंसान।
जाने अपने आप को, सच्चा उसको जान।।

अपना स्वामी आप है, उसे रथी लो जान।
हो लगाम गर हाथ में, मंजिल पक्की मान।।

बंदर के वंशज नहीं, आर्य खुद को जान।
भूल गए तुम कौन हो, लो खुद को पहचान।।

काया तो छाया निरी, लगे दौड़ बेकार।
काया का स्वामी पकड़, कर ले बेड़ा पार।।

मैल जो भीतर छिपा, बाहर जाता दीख।
अंदर अपने झांक कर, झाड़ू देना सीख।।

देखो सबमें आत्मा, अपने जैसी जान।
वहीं पाय परमात्मा, ऐसा सब लो मान।।

राग द्वेष से दूर हो, खुद को लेता जीत।
ऐसा ही मानव सदा, सबके मन का मीत।।

अपनी ताकत जान कर, खुद को तू पहचान।
नहिं सेवक तू जगत का, खुद को मालिक मान।।

बटन दबाने से सदा, ज्यौं प्रकाश हो जाय।
मिले आत्मिक ज्ञान जब, आभा मुख पर छाय।।

एक किरण प्रकाश की, करती तम को दूर।
बोध उसी भगवान का, करता संशय दूर।।

मत बाँटो इंसान को

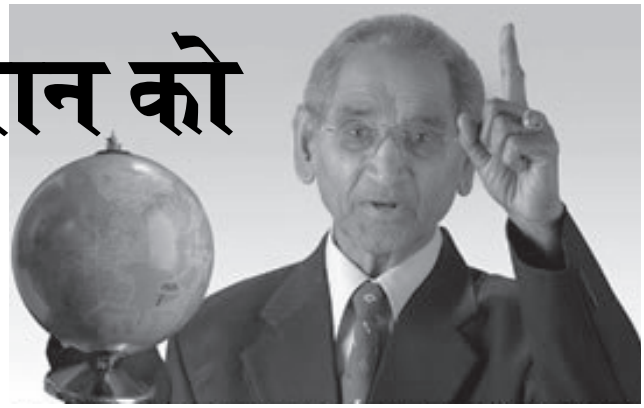

❑डॉ० जगदीश गांधी,
सिटी मॉन्टेसरी स्कूल,
स्टेशन रोड, लखनऊ

मैंने अपनी इण्टर की पढ़ाई मथुरा में की है। बोर्ड परीक्षाओं के पहले मैंने अपने घनिष्ट मित्र आबिद हुसेन के साथ मंदिर तथा मस्जिद में जाकर परमात्मा से अपने-अपने नम्बर बढ़ाने के लिए प्रार्थना करने का निश्चय किया। हम दोनों तैयार होकर पहले मंदिर में प्रार्थना करने के लिए उसकी सीढ़ियों पर चढ़ने वाले ही थे कि साधु की वेशभूषा में दिखे एक व्यक्ति ने हमको रोक लिया। इससे पहले कि हम लोग कुछ बोल पाते उस व्यक्ति ने हम लोगों का नाम पूछा। मैंने कहा-जगदीश गांधी। फिर जैसे ही आबिद ने उसे अपना नाम बताया उस व्यक्ति ने हम लोगों को मंदिर में जाने से मना कर दिया। मैंने उससे पूछा कि आखिर आपने हमें मंदिर में जाने से क्यों रोका? उसने कहा कि तुम मंदिर में जा सकते हो पर यह लड़का मंदिर में नहीं जा सकता। मैंने पूछा कि यह मंदिर में क्यों नहीं जा सकता? इतना सुनते ही वह व्यक्ति गुस्से से लाल-पीला होता हुआ अपने पास में पड़ी हुई एक लाठी को उठाकर हम दोनों की तरफ यह कहते हुए मारने दौड़ा कि अभी बताता हूँ कि मंदिर में क्यों नहीं जा सकते। हिन्दू होकर एक मुसलमान लड़के को मंदिर में लेकर जाते हो। हम लोग उसकी लाठी के मार से बचने के लिए वहाँ से भाग निकले और सीधे मस्जिद की सीढ़ियों पर आकर बैठ गये। तभी मेरा ध्यान आबिद के सिर पर लगी हुई तुर्की टोपी पर चला गया और सारा मामला मेरी समझ में आ गया। मैं समझ गया कि मामला तुर्की टोपी का है। यही वह कारण था कि जिसके कारण मंदिर की सीढ़ियों पर उस व्यक्ति ने हम लोगों को रोका था। अब बारी थी मस्जिद में खुदा की इबादत करने की। इस बार मैंने आबिद के सिर पर लगी हुई तुर्की टोपी को अपने सिर पर लगा लिया। मस्जिद की सीढ़ियों पर चढ़ते हुए हमें मौलवी की वेशभूषा वाले व्यक्ति ने रोक लिया। मैं जानता था कि मंदिर की तरह ही वह व्यक्ति भी हमारा नाम पूछेगा और हुआ भी वही। उसने हम लोगों का नाम पूछा। मैंने इस बार उसे अपना नाम आबिद हुसेन बताया और आबिद ने जैसे ही उस व्यक्ति को अपना नाम जगदीश गांधी बताया वह व्यक्ति चिल्लाने लगा कि तुम हिन्दू होते हुए मस्जिद में क्यों जा रहे थे। मैंने उनसे पूछा कि कहाँ पर लिखा है कि हिन्दू लोग मस्जिद में खुदा की इबादत के लिए नहीं जा सकते हैं? मेरा इतना कहना था कि उस व्यक्ति ने भी वही किया जो पहले मंदिर में हमारे साथ हो चुका था। हम वहाँ से भी भागे और सीधे अपने कमरे पर आ गये। वहीं अपने कमरे पर ही हमने और आबिद ने परमात्मा से प्रार्थना की। अब यह बात हमारे समझ में चुकी थी कि आज लोगों की पहचान तुर्की टोपी, रामनामी दुपट्टा और तिलक के द्वारा होने लगी है।

> आज ईश्वर को मानने वाले तो बहुत सारे लोग हैं किन्तु ईश्वर की मानने वाला कोई नहीं है। धर्मग्रन्थों की पूजा तो सभी करते हैं किन्तु उन धर्मग्रन्थों में लिखी हुई बातों को अपने आचरण में लाने की सोचते तक नहीं हैं।

परमपिता परमात्मा ने सिर्फ एक मानवजाति बनायी है। फिर यह बंटवारा किसकी देन है? मैंने सोचा यह सब राजनेताओं और धर्मगुरुओं की ही देन है। जिन्होंने अपने फायदे के लिए समाज को मत मतान्तरों में बाँट दिया, पर कुछ देर का चिन्तन करने के बाद मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि सारी इनकी गलती नहीं, बल्कि यह उन्हें दी गई उद्देश्यहीन शिक्षा की देन है।

सम्पूर्ण मानवजाति के लिए परमात्मा द्वारा एक ही धर्म निर्धारित किया गया है। वर्तमान समय में मनुष्य अपने आपको विभिन्न प्रकार के धर्मों से सम्बन्धित बताता है। कोई हिन्दू धर्म से, कोई मुसलमान धर्म से, कोई सिख धर्म

से तो कोई ईसाई धर्म आदि से, किन्तु वास्तविकता यह है कि आज कोई भी व्यक्ति न हिन्दू है, न मुसलमान, न सिख और न ईसाई आदि। आज व्यक्ति वर्गों में बँट गये हैं। वास्तविकता यह है कि जब से परमात्मा ने इस सृष्टि का निर्माण किया तभी से परमात्मा ने मानव का धर्म (कर्त्तव्य) निर्धारित कर दिया, जो शाश्वत एवं अपरिवर्तनीय है। अर्थात् जब से सृष्टि का निर्माण हुआ तब से आज तक न तो कभी प्रभु का धर्म बदला है और न प्राणी का धर्म कभी बदला है। अर्थात् दोनों के धर्म सदैव से अपरिवर्तनीय या शाश्वत हैं। जब तक यह सृष्टि और इसमें प्राणी रहेंगे तब तक धर्म अपरिवर्तनीय व शाश्वत रहेगा।

परमात्मा ने जबसे इस सृष्टि को बनाया तब से केवल एक ही प्रभु की इच्छा रही है और सदैव एक ही रहेगी- वह है सम्पूर्ण सृष्टि के समाज का व्यापक हित अर्थात् सर्वजन हिताय सर्वजन सुखाय। अतः प्रत्येक प्राणी का केवल एक ही धर्म या कर्त्तव्य है कि वह संसार के व्यापक हित को ध्यान में रखकर अपने निर्णय ले।

सभी महापुरुष हमें एक ही प्रकार की शिक्षा देते हैं। आज ईश्वर को मानने वाले तो बहुत सारे लोग हैं किन्तु ईश्वर की मानने वाला कोई नहीं है। धर्मग्रन्थों की पूजा तो सभी करते हैं किन्तु उन धर्मग्रन्थों में लिखी हुई बातों को अपने आचरण में लाने की सोचते तक नहीं हैं। राम को तो सभी हिन्दू मानने को तैयार बैठे है किन्तु राम की बात, मर्यादा को मानने वाले आज बहुत कम लोग मिलेंगे। परमात्मा की कृपा प्राप्ति हेतु मनुष्य के आत्मा की शुद्धता बहुत आवश्यक है।

परमात्मा से मिलाने के लिए महर्षि पतंजलि ने अष्टांग योग बनाया। योग के इन आठ सोपानों में पहला सोपान है-यम और दूसरा नियम। अँहिसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये पाँच यम है तथा शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय व ईश्वर-प्रणिधान ये पाँच नियम है। जो व्यक्ति यम-नियमों का पालन करता है, वही सच्चा इंसान बन सकता है।

संसार के जो लोग उन्नति के शिखर पर पहुँचते हैं वे दिव्य, सात्विक विचारधारा वाले ही होते हैं। निकृष्ट विचार वालों का जीवन पूरी तरह से निकृष्ट बन जाता है। संत कबीर अपनी अपनी वाणी में व्यक्त करते हुए कहते हैं-''लागा चुन्दरी में दाग छुड़ाऊँ कैसे, पी के घर जाऊँ कैसे'' संत कबीर जी के अनुसार चुन्दरी पाँच तत्वों से बनी काया है और दाग है-अपने कर्म-संस्कारों का। यदि पिया (प्रभु) से मिलना है, ब्रह्म के दर्शन करना चाहते हैं तो हमें दूषित चेतना रूपी चुन्दरी के समस्त दाग को साफ करना होगा और यह संभव है प्रभु द्वारा बताये गये मार्ग पर चलकर। क्योंकि अशुद्ध काया लेकर हम भगवान के दरबार में कदापि प्रवेश नहीं कर सकते। हमारी आत्मा विराट् नहीं हो सकती।

हम अपनी समस्याओं के हल के लिए दुनिया भर में तो पागलों की तरह दौड़ते फिरते हैं लेकिन पवित्र ग्रन्थों की शिक्षाओं में खोजने का जरा सा भी प्रयास नहीं करते हैं। इस तरह अपनी मर्जी पर चलते हुए हम अपने स्वयं के लिए तथा समाज के लिए समस्याओं की संख्या में वृद्धि करते जाते हैं। प्रभु निर्मित समाज को रहने योग्य बनाने के लिए अब हृदयों की एकता के लिए हमें पूरी तरह से लग जाना है। मेरा मानना है कि आने वाला समय शास्त्रों का नहीं शास्त्रों का होगा। दुनिया शस्त्रों के सामने नहीं बल्कि धर्मशास्त्रों के सामने ही झुकेगी। धर्मशास्त्रों मे ही हमारी व्यक्तिगत, पारिवारिक तथा सामाजिक सभी समस्याओं का हल दिया हुआ है। आवश्यकता केवल धर्मशास्त्रों के माध्यम से दी गयी शिक्षाओं को अपने चरित्र में उतारने अर्थात् ग्रहण् करने की है।

गीत

दीप

दीप निरन्तर जलते जाना।
गहन मेघमालाएँ छाईं
नूतन आशाओं को लाईं
सन्तापों में निखरो प्रतिपल
प्राण नहीं तुम गलते जाना।

कहने को है दीप मालिका
किन्तु न पथ की बनी साधिका
चौंध भयंकर है बाहर की
नहीं हृदय को छलते जाना।

छोड़ सभी राही बढ़ जायें
हँसते शिखरों पर चढ़ जायें
तुम भी उगना सीखो रवि सा
नहीं सूर्य से ढ़लते जाना।

डॉ० महाश्वेता चतुर्वेदी
२४, आँचल कॉलोनी
श्यामगंज, बरेली - २४३००५

एक भूला-बिसरा क्रान्तिकारी
पृथ्वीसिंह आजाद

❑स्व. पंडित चन्द्रकेतु जी
भू. पू. अधिष्ठाता विद्यालय, गुरुकुल कांगड़ी

बात बहुत पुरानी है। तब विदेशों में जाने का पासपोर्ट भी नहीं लेना पड़ता था। उत्तरी अमेरिका विशेषकर कनाडा के घने जंगलों में बन्दूकों के कुन्दे, हथोड़ियों, कस्सियों, बेलचों आदि औजारों के हत्थे, रेल के डिब्बे बनाने के लिए कीमती लकड़ी पर काम करने के लिए उत्तम कारीगरों की अत्यन्त आवश्यकता को देखते हुए भारत-सरकार की दृष्टि पंजाब पर पड़ी। क्योंकि यूरोपियन कारीगर अत्यन्त महंगे पड़ते थे। मेहनती भी कम थे, अत: भारत के बढ़ईयों को वहाँ ले जाकर बसाने का उपक्रम बनाया गया। हजारों सिक्ख और अन्य हिन्दू, मुसलमान वहाँ अधिक पैसा प्राप्त करने की आशा से गए। अब सारे संसार को लकड़ी का सामान वितरित होने लगा। कनाडा प्रान्त की आर्थिक दशा में आशातीत उन्नति हुई। धन भी हमारे श्रमिकों ने खूब कमाया। इतने पर भी गोरे शासकों का व्यवहार हमारे श्रमिकों के साथ अपमानजनक ही रहा। उनको कुली व काला आदमी के नाम से सम्बोधित किया जाता था।

कारण एक मात्र यह था कि हम पराधीन थे। यद्यपि हमारे पंजाबी कारीगर सर्वथा अशिक्षित थे, तथापि उनमें आत्मसम्मान की भावना विद्यमान थी। कनाडा के अनेक नगरों में इन श्रमजीवियों ने गुरुद्वारे स्थापित किए और अपनी ही भाषा में भजन, कीर्तन प्रारम्भ किए।

स्वामी दयानन्द जी के शिष्य श्यामजी कृष्ण वर्मा तथा वीर सावरकर के प्रयत्नों से उनमें देश प्रेम व आत्मसम्मान की भावना जागृत हो गई। समय भी अनुकूल मिल गया। विश्व का प्रथम युद्ध (सन् १९१४) प्रारम्भ हो ही रहा था कि बाबा गुरदत्तसिंह इत्यादि व्यवसायियों के प्रयत्न से इन गुरुद्वारों में देश को स्वतन्त्र करने की भावना अत्यन्त प्रबलता से उद्‌बुद्ध हो गई। 'गदर' नामक साप्ताहिक पत्रिका द्वारा इसका प्रचार भी आरम्भ हो गया। इस पर वहाँ के गोरे शासकों की नींद हराम हो गई। भारत से आने वाले यात्रियों पर प्रतिबन्ध लगा दिए गए।

इस पर कुछ उत्साही व्यवसायियों व श्रमिकों ने बाबा गुरुदत्तसिंह को आगे करके एक जहाज खरीदा, जिसका नाम था- 'कामा गाटामारु', जो भारतीय यात्रियों को लाने ले जाने लगा , परन्तु उसे भी बन्दगाह पर रोककर वापस भारत जाने को बाधित करने पर जन-जागृति पैदा हो गई। प्रत्येक भारतीय प्रवासी स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए तड़प उठा। उनका नारा था- 'चलो देश पर कुर्बान हो जाइये और अपने देश नूं आजाद करिये।' शस्त्रों से लैस सैंकडों भारतीय श्रमिक, जिनमें सिखों की संख्या अधिक थी, कामागाटा-मारू जहाज से भारत रवाना हो गए। ब्रिटेन के शासक भी सजग हो गए। कलकता बन्दरगाह तक तो चुप रहे, परन्तु जब जहाज बन्दरगाह से ८-१० मील दूर रह गया तो सैनिकों ने जलपोतों व नौकाओं से उस जहाज को रोक कर चारों ओर से घेर लिया। उसे आत्मसमर्पण करने के लिए बाधित किया गया, तोप के गोलों से ध्वस्त करने की धमकी दी गई।

मामूली युद्ध के बाद जहाज पर सेना का कब्जा हो गया। सब यात्री कैदी बनाए गए। हथियार, गोला, बारूद, बन्दूकें , रिवाल्वर जप्त कर जहाज को कब्जे में ले लिया गया, किन्तु एक साहसी नवयुवक जिसका नाम पृथ्वीसिंह आजाद था, जहाज से समुद्र में कूद पड़ा। सशस्त्र नौकाओं ने पीछा किया, परन्तु वह सबको चकमा देता हुआ समुद्र तट पर स्नान करते यात्रियों व भक्तों में ऐसा विलीन हुआ कि पुलिस भी उसे न पा सकी। वह कलकत्ते से अपने गांव 'चकवाल-भलवाल' में जा पहुँचा और घर पर कृषि कार्य में लग गया। घर पर चचेरे भाई से जमीन के बंटवारे पर झगड़ा होने और उसकी गवाही पर पुलिस के हाथों पकड़ा गया।

उधार 'कामागाटामारू' जहाज के यात्रियों की सारी सम्पत्ति जो लाखों-करोडों रूपये की थी, सरकार ने जप्त कर ली और उन सबको काले पानी का कठोर दण्ड दिया गया। इस नवयुवक पृथ्वीसिंह आजाद को भी कठोर कारावास (आजन्म कैद) का दण्ड मिला। पंजाबी होने के कारण उसे मद्रास 'मदुरा' जेल में भेजा गया। वहाँ की खुराक इमली का पानी, लाल मिर्च और घटिया किस्म के चावल थे, जो कि पंजाबी कभी खा न सकते थे।

जेल से भागने के उपक्रम में दो बार पकड़े जाने पर उसे पुन: काले पानी (आजन्म कैद) का दण्ड सुनाया गया। फाँसी की सजा भी सुनाई गई परन्तु वह भी आजन्म कैद में परिणत हो गई। कई जेलों में परिवर्तित करते हुए उसे मद्रास की भयंकर जेल (हैवुचल सेंट्रल जेल) में भेजने का आदेश मिला। उसका शरीर हथकड़ी डंडा-बेड़ी से कस कर एक दर्जन सिपाहियों के पहरे में स्टेशन लाया गया और मद्रास मेल के थर्ड क्लास के डिब्बे मे बैठाया गया। डिब्बे में भी ताला लगा था। घन-घोर रात्रि में सब सिपाही ऊँघ रहे थे। उसने शनै: शनै: अपनी जंजीरें समेटीं और खिड़की से थोडा-२ शरीर बाहर सरकाना प्रारम्भ किया। अन्त में उसने चलती ट्रेन से अपना सारा शरीर बाहर गिरा दिया। पत्थरों पर धड़ाम से गिरने की आवाज सुनकर प्रहरी जागे। कैदी को न पाकर गाड़ी की जंजीर खींची गयी। गाड़ी को लौटा कर कैदी की खोज प्रारम्भ हुई, परन्तु पृथ्वीसिंह जिसने 'कार्यं वा साधयेयं, देहं वा पातयेयम्' का दृढ़ संकल्प कर रखा था, उठकर पास के एक काँटेदार थूहर के झुण्ड में जा घुसा। सारा शरीर कांटों से छलनी हो गया परन्तु साँस रोक शांतभाव से बैठा रहा। निराश सिपाही गाड़ी पर सवार होकर आगे रवाना हो गये। सब के चले जाने पर वह नौजवान झाड़ियों से बाहर निकला। सारा शरीर लहूलुहान हो गया था। समीपस्थ एक गाँव के बाहर लुहार के घर पहुँचा और विनयपूर्वक बोला- मेरे बन्धन काट दो, यह सारा लोहा आपका हो जायेगा। पहले तो लुहार डर गया, उसने आना-कानी की, किन्तु फिर बहुत कहने सुनने पर, लोहे के लालच में आकर उसने बंधन काट दिया।

अब वह भूखा प्यासा उस प्रान्त की भाषा से सर्वथा अनभिज्ञ पागलों के समान अर्धनग्न शरीर में कई महीनों की पैदल यात्रा करता हुआ गुजरात प्रांत में आ पहुँचा। शारीरिक स्वास्थ्य जाता रहा, शरीर घावों से छलनी हो गया था। आनन्द भावनगर आदि नगरों में भटकते-२ कुछ स्वास्थ्य लाभ कर उसने एक विद्यालय में नौकरी प्राप्त की। वहाँ विद्यार्थियों को लाठी, लेजियम, मलखम्भ तथा जिमनास्टिक का अभ्यास कराया, जिससे सब विद्यालयों में उसकी ख्याति फैल गयी। भिन्न-भिन्न वेशों में उसने अनेक नगरों में निवास किया। यहाँ तक कि राजकोट के सत्याग्रह में तीन मास जेल भी हो आया। कांग्रेस का सक्रिय कार्यकर्त्ता बन गया तथा गुजराती विद्यार्थियों में क्रान्ति की भावना भरने लगा। उसने ग्रीष्मावकाश में प्रांत के हजारों विद्यार्थियों को एकत्र कर भिन्न-भिन्न विद्यालयों में एक मास का व्यायाम शिविर चलाया। अन्त में भावनगर में मौंटेसरी प्रणाली के प्रसिद्ध शास्त्री श्री 'गिजुभाई' के पास पहुँचा।

गिजुभाई पारखी व्यक्ति थे, उस हीरे को पहचान गए। एकान्त में उसके पिछले जीवन की जानकारी तथा गत २० वर्षों के विस्तृत कारनामों की जीवनी जानकर बोले- यदि आप अपने नकली रूप को छोड़कर असली रूप में प्रकट होकर कार्य करें तो सम्पूर्ण बम्बई प्रान्त, (जिसमें गुजरात प्रान्त भी सम्मिलित था) के मुख्य व्यायाम शिक्षक व इन्सपैक्टर बनाये जा सकते हैं। पृथ्वीसिंह आजाद ने उत्तर दिया- मेरे नाम के वांरट हैं, हजारों रूपये का इनाम मुझे पकड़वाने पर घोषित है, दो दो काले पानी (आजन्म कैद) का दण्ड घोषित है, यहाँ तक कि एक दण्ड फांसी का भी मिल चुका है। सरकार की दृष्टि में अत्यन्त भयंकर अपराधी घोषित होने पर मैं कैसे प्रकट रूप में आ सकता हूँ? कुछ वर्ष हुए प्रसिद्ध क्रान्तिकारी चन्द्रशेखर आजाद इसी आशय से श्री जवाहर लाल के आनन्द भवन से निराश होकर लौट आया था।

गिजुभाई बोले- यदि आप अवसर दें तो मैं महात्मा गांधी जी से मिलकर आपको सर्वथा मुक्त कराने का प्रयत्न कर सकता हूँ। आजाद की स्वीकारोक्ति पर गिजुभाई बम्बई में समुद्र तट पर जुहू नामक एकान्त स्थल पर, जहाँ तुरन्त जेल से रिहा होने पर महात्मा जी एक कुटिया में स्वास्थ्य लाभ कर रहे थे, मिले। सम्पूर्ण बात सुनकर गांधी जी ने इतना ही उत्तर दिया कि यदि पृथ्वीसिंह आजाद मेरे सामने आत्मसमर्पण करके अपना सम्पूर्ण पुराना जीवन सत्य-सत्य वर्णन करे, तो अवश्य ही उसे मुक्त कराने का प्रयास करूँगा। ऐसा ही हुआ भी। आजाद ने जुहू में जाकर गांधी जी के सामने आत्मसमर्पण कर अपनी गत जीवनी विस्तार से सुना दी। इस पर महात्मा जी बोले- मेरी अन्तरात्मा की आवाज है कि तुमने सत्य-२ बात मुझे सुना दी है। मैं तुम्हें सर्वथा मुक्त कराने का प्रयास करूँगा। पर यह सोच लो कि यदि मै तुम्हें पुलिस को सौंप दूँ और पुलिस मेरी प्रार्थना को

अस्वीकार कर न्यायालय द्वारा फांसी पर लटकाने का आदेश दे दे तो तुम क्या करोगे?

इस पर प्रसन्न मुद्रा में आजाद बोला- महात्मा जी, जब मैंने आपको 'आत्मसमर्पण' कर दिया है उस अवस्था में मैं अब चिन्ता मुक्त हूँ, अब मुझे फांसी हो या काला पानी या अन्य यातना मिले मैं सहर्ष सब कुछ स्वीकार करूँगा।

'अच्छा तो सावधान!' इतना कह कर महात्मा जी ने टेलीफोन उठा कर पुलिस मुख्य कार्यालय 'काकड़वाडी' से फोन मिलाया। आवाज आई 'हैलो, कौन बोल रहा है?' मैं गांधी जुहू से बोल रहा हूँ। आप कौन बोल रहे हैं? दूसरी ओर से आवाज आई- मैं बम्बई प्रांत का बड़ा पुलिस इन्स पैक्टर बोल रहा हूँ, आज्ञा कीजिए! क्या सेवा करूँ। गांधी जी बोले- मेरी कुटिया में आज से लगभग २५ वर्ष से फरार आपका एक क्रान्तिकारी बन्दी पृथ्वीसिंह आजाद बैठा है। मैं उसे आपको सौंपना चाहता हूँ, परन्तु यह बताएँ कि क्या आप उसे मेरी जमानत पर छोड़ सकते हैं? पुलिस अधिकारी ने उत्तर दिया- खेद है, यह मेरे अधिकार से बाहर है। मैं तो आपकी आज्ञानुसार उसे श्री सिकन्दर हयात तक पहुँचा सकता हूँ। आगे आप जानें और वे जानें। 'तो फिर पधारिये' इतना कहकर गांधीजी ने फोन रख दिया।

कुछ ही मिनटों में पुलिस आफिसर सशस्त्र सिपाहियों के साथ गांधीजी की कुटिया पर आ पहुँचा। इशारा करते ही, आजाद को गिरफ्तार कर पुलिस स्टेशन ले जाया गया। वहाँ से कड़े पहरे में पंजाब की राजधानी लाहौर और वहाँ से भी 'रावल पिंडी' सैट्रल जेल में।

गांधीजी ने (कांग्रेस और मुस्लिम लीग) की मिली जुली मिनीस्टरी के मु० मन्त्री सिकन्दर हयात खाँ के पास अपने सैकरेटरी श्री महादेव भाई को सारा किस्सा समझाकर लिखित रूप में केस को प्रस्तुत करने के लिए भेजा। अनेक बार पत्रोत्तर के आदान-प्रदान के बाद और न्यायालय में केस का नाटक कर कुछ ही सप्ताहों में 'पृथ्वीसिंह आजाद' को १० वर्ष की कैद का आदेश मिला। इसी बीच गांधीजी के मन्त्री श्री प्यारेलाल व महादेव भाई बारी-बारी से रावलपिण्डी जेल में पृथ्वीसिंह से मुलाकात करने सेवाग्राम से जाते रहे, गांधीजी की सलाह के अनुसार आजाद ने अपना कैदी जीवन बिताना आरम्भ कर दिया। सैंट्रल जेल में ढ़ाई-तीन हजार कैदी थे। पृथ्वीसिंह के प्रयास से चरखे के साथ हथकरघे द्वारा बुनाई का काम प्रारम्भ हो गया। यहाँ तक कि जेल में भयंकर सरहदी पठान कैदी भी उसके आचरण व आदेश से शांत प्रकृति के बन गए।

अब जेल अधिकारियों और कैदियों का नित्य का सिरदर्द व संघर्ष समाप्त हो गया। रावलपिण्डी जेल एक आदर्श सुधार-गृह बन गया, गांधीजी के सतत् प्रयासों व 'आजाद' के उत्तम व्यवहार से प्रसन्न व सन्तुष्ट होकर पंजाब सरकार ने कुछ वर्ष पश्चात् ही सम्मानपूर्वक पृथ्वीसिंह को स्वतन्त्र करने का आदेश दे दिया। (गुरुकुल पत्रिका)

वीरात्मा चौधरी पीरू सिंह

❑सहदेव समर्पित

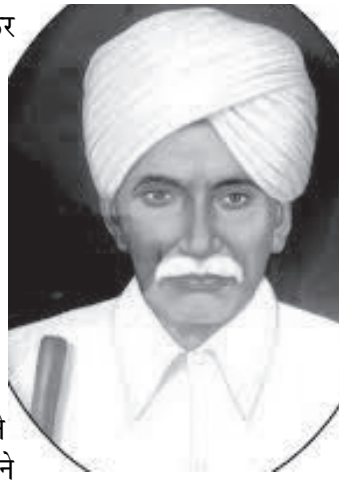

चौधरी पीरूसिंह एक बार टांगे में जा रहे थे। साथ में एक थानेदार बैठा था, जो ब्रिटिश भक्त था। उसने आर्यसमाज के लिए कुछ अपशब्दों का प्रयोग कर दिया। चौधरी पीरूसिंह ने उसकी अच्छी ठुकाई कर दी। फिर अपना नाम पता बता कर कहा कि जो कार्रवाई करनी हो कर लेना। नाम सुनकर थानेदार कांप गया और उसने माफी मांगकर अपना पिंड छुड़ाना ही उचित समझा। (चौ० पीरूसिंह आर्यसमाजी बनने से पहले एक खतरनाक डाकू थे, जिनके नाम से ही पुलिस कांपती थी।)

जब गुरुकुल मटिण्डु की स्थापना हुई तो विरोधियों ने यह अपवाद फैला दिया कि पीरूसिंह ने तो गुरुकुल के चन्दे के नाम पर अपना घर भर लिया है। सामने आने की किसी की हिम्मत नहीं थी। एक दिन पीरूसिंह जी ने यही बात एक नापित के मुंह से सुनी। वे उसको पकड़ कर अपने घर ले गए। उसे पूरा घर दिखा कर कहा- देखो यह पीरू का घर है और पीरू आपके सामने है। बताओ, यहाँ क्या भर रखा है? नापित ने लज्जित हो कर क्षमा मांगी कि मैंने तो ऐसे ही लोगों के बहाकने पर कह दिया था।

एक विस्मृत हिन्दू सम्राट : महाराजा हेमचन्द्र विक्रमादित्य

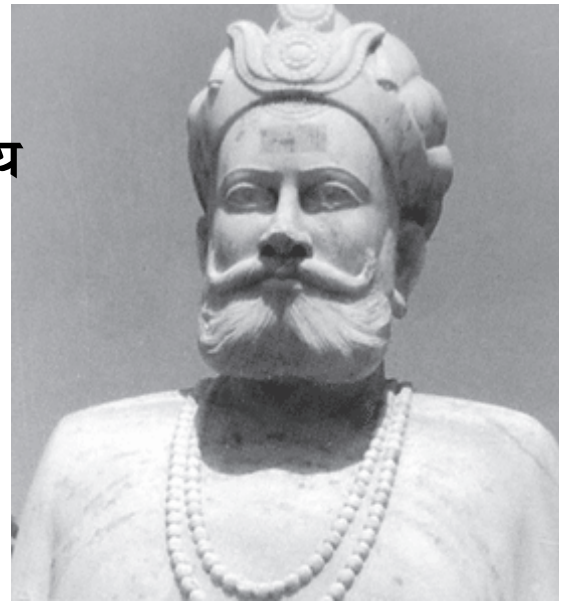

❑विनोद बंसल
329, संत नगर, पूर्वी कैलाश, नई दिल्ली-65

युद्धक्षेत्र की एक दुर्घटना ने उनकी विजय को पराजय में बदल दिया अन्यथा संभवत: युद्ध का परिणाम दिल्ली में मुगलिया सल्तनत स्थापित होने की बजाय संपूर्ण भारत में हिंदू साम्राज्य की आधारशिला के रूप में होता।

सम्राट् हेमचन्द्र विक्रमादित्य, भारतीय इतिहास के उन चुनिन्दा लोगों में से हैं जिन्होंने इतिहास की धारा मोड़कर रख दी। वे पृथ्वीराज चौहान (1179-1192) के बाद इस्लामी शासनकाल के मध्य दिल्ली के सम्भवत: एकमात्र हिन्दू सम्राट् हुए जो विद्युत् की भांति चमके और देदीप्यमान हुए। उन्होंने अलवर के बिल्कुल साधारण से घर में जन्म लेकर एक व्यापारी, माप-तौल अधिकारी, 'दरोगा-ए-डाक चौकी', 'वजीर' (प्रधानमंत्री) और सेनापति होते हुए दिल्ली के तख्त पर राज किया और अपने अपार पराक्रम से 22 युद्धों में विजयी रहकर 'विक्रमादित्य' की उपाधि धारण की। यह वह समय था जब मुगल एवं अफगान- दोनों ही दिल्ली पर राज्य के लिए संघर्षरत थे। यद्यपि हेमचन्द्र अधिक समय तक शासन न कर सके, तथापि इसे भारतीय इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना अवश्य कहा जायेगा। हेमचन्द्र की तूफानी विजयों के कारण कई इतिहासकारों ने उनको 'मध्यकालीन भारत का नेपोलियन' कहा है।

जन्म तथा प्रारम्भिक जीवन :

हेमचन्द्र, राय जयपाल के पौत्र और राय पूरणदास (लाला पूरणमल) के पुत्र थे। इनका जन्म आश्विन शुक्ल विजयादशमी, मंगलवार, कलियुगाब्द 4603, वि.सं. 1556, 02 अक्टूबर, 1501 ई. को अलवर जिले के मछेरी नामक गांव में हुआ था। इनके पिता पौरोहित्य कार्य करते थे, किन्तु बाद में मुगलों द्वारा पुरोहितों को परेशान करने के कारण कुतुबपुर, रेवाड़ी में आकर नमक का व्यवसाय करने लगे।

हेमचन्द्र की शिक्षा रेवाड़ी में आरम्भ हुई। उन्होंने संस्कृत, हिन्दी, फारसी, अरबी तथा गणित के अतिरिक्त घुड़सवारी में भी महारथ हासिल की। साथ ही पिता के नये व्यवसाय में अपना योगदान देना शुरू कर दिया। अल्पायु से ही हेमचन्द्र, शेरशाह सूरी (1540-1545) के लश्कर को अनाज एवं बन्दूक चलाने में प्रयोग होने वाले प्रमुख तत्व पोटेशियम नाइट्रेट अर्थात् शोरा उपलब्ध कराने के व्यवसाय में पिताजी के साथ हो लिए थे। इसी बारूद के प्रयोग के बल पर शेरशाह सूरी ने हुमायूं (1531-1540 एवं 1555-1556) को 17 मई, 1540 ई. को कन्नौज (बिलग्राम) के युद्ध में हराकर काबुल लौट जाने पर विवश कर दिया था। हेमचन्द्र ने उसी समय रेवाड़ी में धातु से विभिन्न तरह के हथियार बनाने के काम की नींव रखी, जो आज भी वहाँ बर्तन आदि बनाने के काम के रूप में जारी है।

दिनांक 22 मई, 1545 ई. को शेरशाह सूरी की मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्र जलाल खां ने इस्लामशाह सूरी के नाम से गद्दी सम्भाली और 1545 से 1554 तक दिल्ली पर शासन किया। पंजाब से बंगाल तक फैले हुए राज्य में कई अफगान-सरदारों ने मौके का लाभ उठाकर बगावत करनी चाही, लेकिन इस्लामशाह ने सबको पराजित कर दिया। इस्लामशाह ने एक प्रतिष्ठित व्यापारी की सिफारिश पर हेमचन्द्र को दिल्ली का बाजार-अधीक्षक बनाया और बाद में उन्हें खाद्य एवं आपूर्ति विभाग का अधीक्षक तथा 'दरोगा-ए-डाक चौकी' के महत्वपूर्ण पद पर आसीन कर दिया। सैन्य गतिविधियों,

प्रशासन और जनसामान्य के बीच एक अविच्छिन्न सम्पर्क-सेतु बनाकर वे आम नागरिक से लेकर सुल्तान तक प्रशंसा के पात्र बन गये। अनेक अफगान-सरदारों की अनिच्छा के बावजूद इस्लामशाह ने हेमचन्द्र को छः हजार सवारों की मुख्तियारी दी और 'अमीर' का खिताब दिया।

दिनांक 22 नवम्बर, 1554 को ग्वालियर में अपनी मृत्यु के पूर्व इस्लामशाह ने पंजाब से हेमचन्द्र को बुलाकर उनको दिल्ली की सैनिक और प्रशासनिक व्यवस्था सौंप दी। इस्लामशाह की मृत्यु के बाद उसका बारह वर्षीय पुत्र फिरोजशाह सूरी गद्दी पर बैठा, किन्तु वह कुछ ही महीने शासन कर सका। 1554 में ही उसे शेरशाह के भतीजे मुहम्मद मुबारिज खान ने मौत के घाट उतार दिया और स्वयं आदिलशाह सूरी के नाम से 1554 से 1555 तक शासन किया। आदिलशाह एक घोर विलासी और लम्पट शासक था और शासन की बिल्कुल भी परवाह नहीं करता था। फलस्वरूप अनेक अफगान-अधिकारियों ने उसके विरुद्ध बगावत शुरू कर दी। विद्रोह को दबाने और राजस्व वसूली के लिए आदिलशाह ने हेमचन्द्र को ग्वालियर के किले में न केवल अपना 'वजीर' बनाया, वरन अफगान सेना का सेनापति भी नियुक्त कर दिया। हेमचन्द्र पर शासन का भार डालकर आदिलशाह ने चुनार (मिर्जापुर के पास) की राह पकड़ी। इस प्रकार सम्पूर्ण अफगान शासन हेमचन्द्र के हाथ में आ गया। अवसर पाकर हेमचन्द्र ने हिन्दू राज्य का स्वप्न देखा।

हुमायूं, जो पहले 1540 ई. में शेरशाह सूरी द्वारा हराकर काबुल खदेड़ दिया गया था, ने दुबारा हमला करके शेरशाह सूरी के भाई सिकन्दर सूरी को पंजाब से हराकर जुलाई 1555 ई. में दिल्ली पर अधिकार कर लिया। उस समय अफगान-सरदार आपस में ही संघर्षरत थे। उत्तर भारत, मध्य भारत, बिहार और बंगाल तक उन्होंने अपने झण्डे बुलंद कर दिए। आदिलशाह के सबसे बड़े शत्रु इब्राहीम खान ने कालपी में सिर उठा लिया था। तब आदिलशाह ने हेमचंद्र को बड़ी सेना और पाँच सौ हाथी तथा तोपखाना देकर आगरा और दिल्ली के लिये भेजा। हेमचंद्र ने कालपी पहुँचकर निश्चय कर लिया कि पहले इब्राहीम को समाप्त किया जाए। उन्होंने शीघ्रता से उसकी ओर कूच किया। एक बहुत बड़ी लड़ाई हुई, जिसमें हेमचंद्र विजयी हुए और इब्राहीम भागकर बयाना चला गया। हेमचंद्र ने उसका पीछा किया और बयाना को घेर लिया। यह घेरा तीन महीने तक चलता गया। तभी हेमचंद्र को आदिलशाह का आदेश प्राप्त हुआ कि बंगाल के सूबेदार मुहम्मद ख़ान गोरिया (1545-1555) ने विद्रोह कर दिया है। तब हेमचंद्र ने बंगाल की ओर कूच किया और आगरा से 15 कोस की दूरी पर छप्परघाट नामक गांव के निकट मुहम्मद ख़ान गोरिया से लड़ा जिसमें मुहम्मद मारा गया। इसके बाद हेमचंद्र ने बंगाल में अपने सूबेदार शाहबाज़ ख़ान को नियुक्त किया। इसके 6 माह बाद दिल्ली में हुमायूं की मौत (27 जनवरी 1556) का समाचार सुनकर समझ लिया कि अब हिंदू राज्य के स्वप्न को साकार किया जा सकता है। हेमचंद्र ने मुगल साम्राज्य को उखाड़ फैंकने के लिये दिल्ली की ओर कूच किया और ग्वालियर से निकलकर बंगाल, बिहार, पूर्वी उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश व आगरा की कई रियासतों को जीतते हुए, 22 युद्ध लड़े।

दिल्ली पर विजय व राज्यारोहण :

6 अक्टूबर 1556 को हेमचंद्र ने अपने सभी सेना अधिकारियों, अनेक पठान योद्धाओं, 40 हज़ार घुड़सवारों, 51 बड़ी तोपों और 500 छोटी तोपों के साथ दिल्ली के कुतुब मीनार से सेकेंड मील दूर तुगलकाबाद में अपना डेरा जमाया। दिल्ली के सूबेदार तारदीबेग ख़ान ने उनका मुकाबला करने का असफल प्रयास किया किंतु उसे अपने लगभग 3 हज़ार मुगल सैनिकों, अपार धन संपत्ति, 1 हज़ार अरबी घोड़े तथा लगभग 15 सौ हाथियों से हाथ धोना पड़ा और स्वयं जान बचाकर भागना पड़ा। अगले ही दिन दिनांकित अक्टूबर 1556 को दिल्ली के पुराने किले में अफगान और हिंदू सेनानायकों के सानिध्य में पूर्ण हिंदू धार्मिक विधि से उनका राज्याभिषेक हुआ और उन्हें विक्रमादित्य की उपाधि से विभूषित किया गया। 364 वर्षों के मुगल शासन में पहली बार किसी हिंदू शासक ने गद्दी संभाली थी।

हुमायूं की मृत्यु के पश्चात् उसके 14 वर्षीय पुत्र अकबर (1556-1605) को उसके कई सेनापतियों व संरक्षक बैरम ख़ान ने हेमचंद्र से युद्ध करने के लिए प्रेरित किया। 5 नवंबर 1556 को पानीपत में हुए इस युद्ध में अकबर और बैरम ख़ान ने स्वयं में भाग नहीं लिया और युद्ध क्षेत्र से सेंचुरी किलोमीटर दूर सौधापुर गांव स्थित शिविर में ही रहे, जबकि हेमचंद्र ने स्वयं अपनी सेना का नेतृत्व किया। एक ओर हेमचंद्र की सेना में कुल कुलचिह्न लाख सैनिक, 1500 सुरक्षा कवचधारी हाथी, योद्धा व धनुर्धर थे तो वहीं दूसरी ओर मुगल सेना में कुल 20 हज़ार अश्वारोही सैनिक ही थे। अकबर की सैन्य टुकड़ी की कूटनीतिक चालों ने एक बार तो हेमचंद्र के सैनिकों को तोपें छोड़ मैदान से भागने पर विवश कर दिया, किंतु जब हेमचंद्र

स्वयं हाथियों के साथ आगे बढ़े तो मुगल सेना का बायां पक्ष हिल उठा। 'हवाई' नामक एक विशाल हाथी पर सवार होकर सैन्य संचालन कर रहे हेमचंद्र ने ताबड़तोड़ तीरों की जो बौछार की उससे मुगल सेना भयभीत हो चुकी थी। इसी बीच वे भी शत्रुओं के तीरों से घायल तो थे, किंतु सहसा एक तीर उनकी आंख को चीरता हुआ मस्तिष्क में घुस गया और वे मूर्छित होकर हौदे में गिर पड़े। हेमचंद्र के गिरने की सूचना मात्र से उनके सैनिक बुरी तरह भयभीत होकर युद्ध-क्षेत्र से भाग खड़े हुए और अकबर को बैठे बिठाए निर्णायक सफलता प्राप्त हो गई। बाद में उनके मृतप्राय: शरीर को शाह कुली ख़ान अनेक सैनिकों के साथ अकबर के समक्ष ले गया जहाँ स्वयं बैरम ख़ान ने अकबर के ही समक्ष उनके टुकड़े-टुकड़े कर सिर को काबुल में और धड़ को दिल्ली में बेरहमी से दरवाज़ों पर लटकाया। इतना ही नहीं, दोबारा कोई विद्रोह न कर सके, इसलिए हेमचंद्र के सैनिकों और शुभ चिंतकों के हज़ारों कटे सिरों का बुर्ज बनाया गया, उनकी संपत्ति पर कब्ज़ा कर उनके पिता राय पूरणदास के भी टुकड़े-टुकड़े कर डाले और उनका कुल नष्ट करने के लिए अलवर, रेवाड़ी, नारनौल, आनौड़ आदि क्षेत्रों में बसे हुए उनके सहयोगियों को चुन-चुनकर बंदी बनाया गया।

अनेक इतिहासविदों, समाजसेवियों ने हेमचंद्र की महान राष्ट्रभक्ति, कुशल सैन्य संचालन का गुणगान करते हुए लिखा है कि चाहे उन्होंने मात्र एक महीने ही राज किया हो किंतु उनका प्रभावशाली व्यक्तित्व, भारतीय इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण अध्याय है। संयोगवश उनकी व उनके हाथी की आँख में तीर लग जाने से अकबर की लॉटरी लग गई।

मध्यकालीन और आधुनिक इतिहासकारों ने हेमचंद्र विक्रमादित्य के प्रति न्याय नहीं किया तथा युद्धक्षेत्र की एक दुर्घटना ने उनकी विजय को पराजय में बदल दिया अन्यथा संभवत: युद्ध का परिणाम दिल्ली में मुगलिया सल्तनत स्थापित होने की बजाय संपूर्ण भारत में हिंदू साम्राज्य की आधारशिला के रूप में होता।

पराक्रमी राष्ट्रीय महापुरुष थे सम्राट् हेमचंद्र विक्रमादित्य : प्रो. सतीश चंद्र मित्तल

नई दिल्ली, अक्टूबर 5, सम्राट् हेमचंद्र विक्रमादित्य सोलहवीं सदी के उन राष्ट्रीय महापुरुषों में से एक थे जिनकी वीरता ने विदेशी आक्रांताओं और मुगल साम्राज्य के छक्के छुड़ा दिए। मात्र 29 दिनों के शासन काल में उन्होंने हिंदवी स्वराज की ओर अनेक कदम उठाए। 24 युद्धों में से 22 में सफल रहे। 7 अक्टूबर 1556 ई. के दिन दिल्ली के पुराने किले में सम्राट् विक्रमादित्य की उपाधि के साथ उनका राज्यारोहण हुआ। प्रसिद्ध इतिहासकार व अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना के राष्ट्रीय अध्यक्ष प्रो. डॉ. सतीश चंद्र मित्तल ने कहा कि पानीपत युद्ध के दौरान दुर्घटनावश यदि उनकी और उनके हाथी की आँख में तीर न लगा होता तो मुगलिया सल्तनत और विदेशी आक्रांता उसी समय समूल नष्ट हो गये होते। ये बातें उन्होंने अखिल भारतीय इतिहास संकलन योजना द्वारा दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय सभागार में आयोजित गोष्ठी -'एक विस्मृत हिंदू सम्राट् महाराजा हेमचंद्र विक्रमादित्य' में कहीं। मुख्य अतिथि के रूप में बोलते हुए पूर्व केंद्रीय मंत्री व प्रख्यात विचारक डॉ. सुब्रह्मण्यम् स्वामी ने कहा कि मुगल आक्रांताओं व अंग्रेज़ों ने दुनिया के जिन जिन देशों में आक्रमण किए, वहाँ की लगभग शत प्रतिशत आबादी को इस्लाम या ईसाइयत में परिवर्तित कर दिया। ईरान, ईराक, मिश्र व यूरोप इसके स्पष्ट उदाहरण हैं। किन्तु भारत पर 800 वर्ष मुगलों व 200 वर्ष अंग्रेज़ों ने शासन किया। तो भी, हमारी हिंदू जनसंख्या अभी 85 प्रतिशत से ज़्यादा है। इसके पीछे महाराणा प्रताप, वीर शिवाजी, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई तथा सम्राट् हेमचन्द्र विक्रमादित्य जैसे रणबांकुरों व धर्मधुरंधर देशभक्तों का बलिदान ही तो है। उन्होंने अंग्रेज़ों तथा साम्यवादी विचारधारा से प्रभावित तथाकथित इतिहासकारों को आड़े हाथों लेते हुए यह भी कहा कि ऐसे योद्धाओं के पराक्रमशाली चरित्र को षड्यंत्रपूर्वक पाठ्यपुस्तकों से बाहर रखा गया जिसे शामिल किए जाने की नितांत आवश्यकता है, जिससे देश की युवा पीढ़ी अपने पूर्वजों की शौर्यगाथा तथा उनके महान कार्यों को याद कर अपने भविष्य को सँवार सके। विहिप के अंतर्राष्ट्रीय संयुक्त महामंत्री श्री विनायक देशपांडे ने कहा कि भारत की स्वतंत्रता व हिंदवी स्वराज्य की स्थापना के कर्णधार पृथ्वीराज चौहान, बाजीराव पेशवा, सदाशिवराव पेशवा तथा हेमचंद्र विक्रमादित्य जैसे भारत माँ के सपूत महापुरुषों के स्मृतिचिह्न व स्मारक बनाए जाने की आज महती आवश्यकता है। यह दिल्ली का दुर्भाग्य है कि इंद्रप्रस्थ की स्थापना करने वाले पांडवों व उनके राजा युधिष्ठिर तक का कोई स्मारक भी दिल्ली में नहीं है।

इतिहास संकलन समिति के राष्ट्रीय संगठन सचिव श्री बालमुकुंद पांडे ने अतिथियों का परिचय कराया तथा जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के संस्कृत विभागाध्यक्ष प्रो. संतोष शुक्ला द्वारा मंच संचालन किया गया। समिति के प्रांत महामंत्री श्री अरुण पांडे कार्यक्रम के संयोजक थे। प्रसिद्ध इतिहासकार श्री सोहनलाल जी रामरंग, विहिप के क्षेत्रीय संगठन मंत्री श्री करुणा प्रकाश, प्रान्त महामंत्री श्री राम कृष्ण श्रीवास्तव तथा लाल बहादुर शास्त्री संस्कृत अकादमी के उप कुलपति प्रो. रामनिवास पाण्डे सहित अनेक गणमान्य लोग उपस्थित थे।

❐अरुण पाण्डे, प्रान्त महामंत्री, 9868855949

❑रामफलसिंह आर्य

हजारों रूपयों की अनावश्यक खरीददारी के स्थान पर कोई आकर उनके लिये भी सोचता। महलों में दीप तो सभी जलाते हैं कोई झोंपड़ी के द्वार पर एक छोटा सा दीया रख जाता।

त्यौहारों के इस अवसर पर शहर में चारों ओर चहल पहल दृष्टिगोचर होती थी। बाजारों की सजावट प्रत्येक को अपनी ओर बरबस आकर्षित कर लेती थी। आबाल वृद्ध सभी के मन में उत्साह भरा हुआ था और हर प्रकार की दुकानों के ऊपर भीड़ ही भीड़ दिखाई देती थी। कपड़े, जूते, गहने, इलैक्ट्रोनिक्स बर्तन, फल मेवे, मिठाईयां, वाहनों, ऊनी वस्त्रों आदि सभी की दुकानों के आगे ग्राहकों को लुभाने वाले एवं भारी छूट को दर्शाने वाले आकर्षक बैनर एवं विज्ञापन लगे थे। दीपावली के पर्व में सजावट का ही तो कार्य अधिकतर होता है। रंगाई पुताई का कार्य करने वाले लोगों के पास आजकल समय था ही नहीं। सांयकाल के समय तो ऐसा लगता था मानों घरों से सारी भीड़ निकल कर बाजारों में समा गई हो। हर व्यक्ति अपने लिये कुछ न कुछ क्रय करने में लगा था। यदि कहीं पर कुछ कम उत्साह दिखाई देता था तो वह थी रेलवे स्टेशन के दक्षिणी भाग में झुग्गी झोंपड़ियों की यह बस्ती जिसे लोग झोपड़ पट्टी के नाम से पुकारते थे। पिछले दस बारह वर्षों से ये लोग इस स्थान पर डेरा डाले बैठे थे और इस समय लगभग एक सौ पचास साठ झोंपड़ियां इस स्थान पर बन चुकी थी जिनमें लगभग साठ आठ सौ जीव निवास पा रहे थे। इन लोगों के लिये त्यौहारों की इस चमक दमक का कोई मूल्य नहीं था। जीवन संघर्ष जैसे पहले चला था वैसे ही अब भी था। न पानी की व्यवस्था न प्रकाश की, न कोई भोजन का ठिकाना न सुरक्षा का। फिर शिक्षा, चिकित्सा एवं सुख सुविधाओं की गाथा ही व्यर्थ है। पीने के लिये पानी ये लोग रेलवे के रिसते हुए पानी के टैंक से लेते हैं। जब तक रेलवे वाले उसे ठीक नहीं करते तब तक पानी सरलता से मिल जाता है उसके पश्चात् इन्हें स्टेशन की दूसरी ओर लगे नलके तक जाना पड़ता है।

गुल्लू का परिवार भी इन्हीं झोपड़ियों में अपना आश्रय पाये हुए जैसे तैसे जीवन की गाड़ी को धक्का देकर चला रहा था। इसके परिवार में पांच जीव थे, पत्नि केलां, बड़ा बेटा काली, छोटा बेटा सत्तू और एक बेटी संतरो। गुल्लू का परिवार मूर्तियां बनाने का कार्य करता था। मिट्टी से यह परिवार अत्यन्त सुन्दर मूर्तियां बनाता था जिनमें विभिन्न देवी देवताओं की, पक्षियों जानवरों एवं अन्य खिलौनों की मूर्तियां होती थी। बड़ा बेटा स्टेशन पर कुली का कार्य करता था शेष लोग गुल्लू का हाथ बंटाते थे। उसकी पत्नि केलां एवं बेटी सन्तरो मूर्तियों को रंग करने का कार्य करते थे। गुल्लू एवं सत्तू मूर्तियां उठा कर सुबह-२ रेलवे फाटक के पास एक स्थान पर दुकान लगाते और सांयकाल को अपना सारा माल समेट कर घर वापस ले आते थे। जो कुछ थोड़ी बहुत आय होती उससे परिवार किसी ने किसी प्रकार से अपना पेट पाल रहा था। कुली का कार्य करने वाला उसका बेटा काली अब अपनी कमाई अधिकतर अपने पास ही रखता था। पिता से उसकी कम ही बनती थी। अब तो वह शराब का भी सेवन करने लगा था अतः पैसे बचने का अवसर कहां था।

रात्री के समय शहर के ऊंचे-२ भवनों पर की गई प्रकाश व्यवस्था देखते ही बनती थी। माल रोड़ पर आने जाने वाले वाहनों की कतारें मानों एक पूरा पुल तैयार कर देती थी। रंग बिरंगी चमचमाती कारों की जब पंक्ति लग जाती तो बीच में से पैदल चलने वालों के लिये भी पार करना कठिन हो जाता। इसके अतिरिक्त स्कूटर, मोटर साईकिल, रिक्शा आदि सब कुछ मानों शाम के समय एक दूसरे के साथ होड़ लगाकर दौड़ते हैं। दीपावली के दिन तो सुबह-२ ही पूरा मेला लग गया। व्यापारी लोग अपनी दुकानों को दुल्हन की तरह सजाये बैठे थे। ऐसा लगता था कि ग्राहक आज सारी खरीदारी करके ही सांस लेंगे। बाजारों में भीड़ बढ़ती ही जा रही थी जिसके कारण सारा वातावरण

महक रहा था।

गुल्लू भी अपनी मूर्तियां सड़क के किनारे रखे आने जाने वालों को पुकार रहा था, "आओ बाबू जी! बहन जी! भाई साहब! ब्हुत सुन्दर मूर्तियां हैं। ले जाओ दीवाली के दिन घर को सजाओ। ये लो राम जी, कृष्ण जी, लक्ष्मी, हनूमान, गणेश, तोता मैना, मोर, गुड़िया जो भी चाहे ले जाओ। इससे सस्ती और कहीं न मिलेगी" कुछ लोग आते, उलट पलट कर मूर्ति को देखते फिर आगे बढ़ जाते। गला फाड़ कर चिल्लाते-२ उसे बहुत समय हो गया, बिक्री कुछ हो नहीं रही थी। इससे अधिक तो वह कई सामान्य दिनों में कमा लिया करता था। आज पता नहीं ग्राहक क्यों नहीं आ रहे। इन मूर्तियों के बनाने में उन सभी ने कितना परिश्रम किया था। कई दिन पहले से वह बढ़िया मिट्टी शहर के बाहर से जाकर लेकर आया था। अच्छी प्रकार से उसकी घुटाई करके सब लोगों ने रात दिन लगा कर विशेष रूप से इस त्योहार के लिये मूर्तियां तैयार की थी। मूर्तियां बनाते समय सब यह सोच-२ कर प्रसन्न हो रहे थे कि यदि इसमें से आधी भी बिक गई तो दीवाली पर बहुत कुछ खरीदा जा सकेगा। पत्नी के लिये नई साड़ी, सन्तरो के लिये स्वेटर, सत्तू अपने लिये एक साईकिल खरीदने की जिद कर रहा था। इस परिवार के लिये ये मात्र मूर्तियां नहीं थी अपितु उनके सपने थे जो छोटी-२ वस्तुओं के लिये देखे जा रहे थे। स्वयं गुल्लू सोच रहा था कि वह एक रेहड़ी ले लेगा फिर उस पर रख कर मूर्तियां बेचा करेगा तो शहर में कई जगह घूम लेगा। कुछ पैसे बचेगें तो दीपावली पर कुछ मिठाईयां एवं पटाखे आदि ले लेगा।

दोपहर होने को आई, परन्तु गुल्लू की बिक्री कुछ विशेष नहीं हुई। दोपहर बाद कुछ मूर्तियां बिकीं और शाम तक उसके पास कुछ पैसे आ गये, परन्तु वे इतने कम थे कि उनसे सायंकाल का खाना ही पूरा पड़ता। सायंकाल को भीड़ कम हो गई, लोग अपने घरों में धूमधाम से दीपाली मना रहे थे। पटाखों की कानों को बहरा करने वाली ध्वनियां गूंजनी शुरू हो गई थी। गुल्लू ने अपनी दुकान समेटी और भारी मन से घर की ओर चल दिया। पता नहीं लोगों की आजकल कैसी रूचि हो गई है। कितनी सुन्दर मूर्तियां बनी थी, फिर भी बिकी नहीं।

घर पर पत्नी एवं पुत्री प्रतीक्षा कर रही थी कि अब पैसे आयेगें तो सपने साकार होंगे। परन्तु सपने तो सपने ही हैं। गुल्लू का लटका हुआ मुंह देखकर ही वे समझ गई कि दीवाली के रंग फीके हैं। इस समय पूरा शहर धूम धड़ाके से गूंज रहा था, परन्तु गरीब की झोपड़ी में सन्नाटा था। चारों ओर तीव्र प्रकाश जगमग कर रहा था परन्तु गुल्लू की झोंपड़ी निराशा के गहन अन्धकार में लीन थी।

नगर वासियों ने करोड़ों रूपये के पटाखे फूंक डाले परन्तु इस गरीब बस्ती की ओर से सब उदासीन थे। सब ओर बधाईयों का तांता लगा था परन्तु गुल्लू और उसका परिवार अपनी दुर्दशा पर आंसू बहा रहा था। दीपावली की यह चहल पहल, यह जगमग मानो उनको मुंह चिढ़ा रही थी। काश! कोई उनके दुःख दर्द को भी समझने वाला होता। कोई आकर उनकी तनिक सी भी सुध लेने वाला होता। हजारों रूपयों की अनावश्यक खरीददारी के स्थान पर कोई आकर उनके लिये भी सोचता। महलों में दीप तो सभी जलाते हैं कोई झोंपड़ी के द्वार पर एक छोटा सा दीया रख जाता। शहर की इस सजावट को देखकर सन्तरो ने पिता की ओर देखा तो मानो उसकी आखों में एक प्रश्न था कि यह भेद क्यों हैं?

पिता ने बच्ची को खींच कर छाती से लगा लिया और उसकी आखों से आंसू निकल कर बच्ची के मस्तक पर टपक पड़े।

पग-पग झेलें!

❐सूबेदार धर्मसिंह

उजियारा क्यों मन का छोड़ें-
कीच, तिमिर सा पसर गया है।
झूठ लबादा ओढ़े सच का
विष घोले पल-पल जीवन में।
हर पल बैठे घात लगाये,
चैन कहाँ पड़ता है उर में।
झुलस गई हैं सभी बहारें,
बदबू ही बदबू जीवन में।
पानी उतरा है दर्पण का,
अक्श कहां उभरे है मन का।
पग-पग झेले मार सच्चाई,
लूट मची है घर आंगन में।
रिश्वत खोरी, आपा धापी,
आग लगायें अमन चैन में।
छिप जाता है सूरज मन का,
बढ़ जाती खुदगर्जी मन में।
कहाँ खुशबू को मिले ठिकाना,
पाप भरा हो जब भी मन में।
सुरा-सुन्दरी मन में बसती,
आग लगे चाहे गुलशन में।

-महम्मूदपुर माजरा, जिला झज्जर-१२४१३३ (हरियाणा)

गृहस्थ यज्ञ है

❑सत्यसुधा शास्त्री

देवताओं की पूजा : जब घर में देवताओं की पूजा होती है तो उनका मार्गदर्शन और आशीर्वाद मिलता है। उनके अनुभवों का लाभ मिलता है। देव घर के बड़े बूढ़े हैं। क्या हमारे घर में वे सम्मानित हैं? प्रत्यक्ष देवता तो वे ही हैं। जो हमें जीवन भर देते रहे हैं और अपना सब कुछ देने के बाद अब भी देते ही जा रहे हैं। यदि उनकी उपेक्षा करके, उनकी सुख सुविधाओं का ध्यान न रखके हम कोसों दूर देवी देवताओं को मनाने या उनकी पूजा करने जाते हैं तो याद रखना चाहिए कि वे हमें सुख नहीं दे सकते।

सत्य का उपदेश देने वाले विद्वान् देवता हैं। वे क्या समय समय पर हमारे घरों में पधारते हैं? या क्या हम उन्हें पुकारते हैं, आमन्त्रित करते हैं? यदि नही, तो हमें सत्य का उपदेश कौन देगा? हमारे अन्दर समय समय पर आने वाली न्यूनताओं का निराकरण करने वाले विद्वान् महात्माओं की पूजा नहीं होगी तो उनका कुछ नहीं जाएगा, बल्कि हम अपने मार्ग से भटक जाएँगे।

परिवार और समाज के लिए यह बहुत घातक सिद्ध हो रहा है। पक्षपातरहित परोपकारी विद्वान् महात्माओं की संख्या कम हो रही है। हमें उनकी आवश्यकता ही नहीं रही! परोपकारी विद्वानों की संख्या कम होने के कारण और घरों में उनकी प्रतिष्ठा न होने के कारण समाज में अंध परम्पराएँ बढ़ रही हैं। अंधविश्वास बढ़ रहे हैं, लोग भेड़ बकरियों की तरह हांके जा रहे हैं। गुरुडम वाद बढ़ रहा है, नित नए-नए भगवान पैदा हो रहे हैं। कोई समोसे चाट खिलाकर सभी समस्याओं का समाधान कर रहा है और लोग उनकी बातों में आकर अपने घर बार लुटवा रहे हैं। हमारे पूर्वज विद्वानों ने तो पहले ही कह दिया था कि जब सत्योपदेशक विद्वान नहीं रहते तो इसी प्रकार अंधपरम्पराएँ चलती हैं। जब हम सच्चे देवताओं की पूजा करते हैं तो यह यज्ञ कार्य हो जाता है और वह यज्ञ हमें विस्तार देता है, हमारे छोटेपन को बड़प्पन में बदल देता है।

संगतिकरण : यह यज्ञिय भावना का एक अद्‌भुत अंग है। गाड़ी के चार पहियों में संगतिकरण होता है, तभी गाड़ी चलती है। हम चलचित्र देखते हैं। आँख दृश्य देखती है, कान मधुर संगीत ध्वनि सुनते हैं। मन एकाग्र हो जाता है, तभी हम संगीत का आनन्द ले सकते हैं। ऐसे समय में यदि आँख, कान और मन का संगतिकरण न हो तो हम उस चित्र का आनन्द अनुभव नहीं कर सकते। यह हमारी इन्द्रियों का एक छोटा सा सगंठन है, इनमें अद्‌भुत संगतिकरण है। परिवार में समाज में, राष्ट्र में इसके सभी अंगों में संगतिकरण नहीं होगा तो कोई भी कार्य सफल नहीं हो सकता। परिवार में स्त्री का स्थान बड़ा है या पुरुष का-- वास्तव में यह झगड़ा पाश्चात्य संस्कृति की देन है, हमारी संस्कृति में तो अपने स्थान में पुरुष बड़ा है और अपने स्थान में स्त्री बड़ी है। दोनों के कर्त्तव्य, कर्म और दायित्त्व भिन्न-भिन्न होने से किसी के सम्मान में कोई कमी नहीं आती। कुछ कार्य ऐसे हैं जिन्हें केवल पुरुष ही कर सकता है, स्त्री नहीं कर सकती। इससे पुरुष का बडप्पन ही सिद्ध होता है नारी का महत्त्व कम नहीं होता। ऐसे ही कुछ कार्य केवल स्त्री ही कर सकती है, पुरुष नहीं कर सकता। इससे नारी का महत्त्व सिद्ध होता है, पुरुष का महत्त्व घटता नहीं है। ये दोनों एक दूसरे के पूरक हैं।

आज वैदिक शिक्षा के अभाव में नारी और पुरुष को प्रतिद्वंद्वी बना दिया गया है। वैदिक शिक्षा तो 'अन्यो अन्यम् अभिहर्यत' के द्वारा संगतिकरण का मार्ग बताती है। यदि संगतिकरण न होगा तो गृहस्थ चल ही नहीं सकता। नर और नारी के साथ साथ पूरे परिवार में संगतिकरण आवश्यक है। फिर परिवार को भी संगकिरण करना है- दूसरे परिवारों से, समाज से। जिस तरह शरीर हमारा है, उसी तरह समाज भी हमारा है। सुखी जीवन जीने के लिए समाज को भी अच्छा बनाने का प्रयास करना चाहिए।

दान : दान की तो जैसे गृहस्थ प्रयोगशाला ही है। हम परिवार के लिए हर तरह का दान करते हैं। माता पिता बच्चों के लिए त्याग ही त्याग करते हैं।

दु:खों का घर नहीं है गृहस्थ

❒श्री अशोक कौशिक

महापुरुषों ने गृहस्थाश्रम की महानता का पदे-पदे बखान किया है। वेद और शास्त्रग्रंथ इसके प्रमाण हैं। मनुस्मृति के अध्याय ३ में कहा गया है कि जिस प्रकार वायु के आश्रय से सारे प्राणी जीवित रहते हैं, वैसे ही गृहस्थाश्रम के आश्रय से अन्य सब आश्रम वर्तमान रहते हैं। मनु ने आगे कहा-'गृहस्थाश्रम के आश्रय ही अन्य तीन आश्रमों के पालन-पोषण आदि की व्यवस्था की जाती है, इसीलिये गृहस्थाश्रम सबसे बड़ा आश्रम है।

समाजोद्धारक महर्षि दयानन्द ने भी अपने ग्रंथों में गृहस्थाश्रम की मनु के समान ही प्रशंसा की है। यजुर्वेद-भाष्य प्रसंग में महर्षि ने लिखा है-किसी को कभी भी गृहस्थाश्रम के अनुष्ठान से भयभीत और कम्पित नहीं होना चाहिए क्योंकि सभी उत्तम व्यवहारों का और आश्रमों का मूल आधार गृहस्थाश्रम है। इसीलिये इसका भलीभाँति अनुष्ठान करना चाहिए। इस गृहस्थाश्रम के बिना मनुष्यों की वृद्धि और राज्य की सिद्धि नहीं होगी।

इसके विपरीत मध्यकाल के अनेक व्यक्तियों ने कुछ इस प्रकार भी कहा है-'यदि प्रभु प्राप्ति के मार्ग में चलना है तो गृहस्थाश्रम में नहीं फंसना चाहिये। उनका मानना है कि ईश्वर प्राप्ति और सांसारिक उन्नति परस्पर विरोधी हैं, किन्तु किसी ने भी वेद अथवा शास्त्रग्रंथों द्वारा अपने कथन की पुष्टि नहीं की है। अत: किसी के कथन-मात्र से गृहस्थ को हीन मान लेना उचित नहीं है।

दयानन्द सरस्वती ने ही अपने भाष्य में कहा-'गृहस्थाश्रम के आश्रय ही सब आश्रम है। उन आश्रमों का वेदोक्त उत्तम व्यवहार के अनुसार सेवन किया जाये तो वे अभ्युदय (सांसारिक सुख) और नि:श्रेयस (मोक्ष) सुख के संपन्न करने वाले होते ही हैं, इसलिये परमेश्वर की प्राप्ति के लिए गृहस्थाश्रम को सेवन करना ही चाहिये।' गृहस्थाश्रम के निन्दकों की भर्त्सना करते हुए उन्होंने सत्यार्थप्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में लिखा है-जो कोई गृहस्थाश्रम की निंदा करता है, वही निंदनीय है और जो प्रशंसा करता है वही प्रशंसनीय है।

देशोत्थान, समाजसुधार, शिक्षा और धर्म प्रचार आदि जैसे अनेक कार्यों में तीव्रता, निरंतरता और निर्द्वन्दिता की दृष्टि से कुछ प्रभावशाली स्त्री-पुरुषों का ब्रह्मचर्याश्रम से सीधा वानप्रस्थ अथवा संन्यासाश्रम में प्रविष्ट होना अथवा नैष्ठिक ब्रह्मचर्य का जीवन-यापन करना श्रेष्ठ है, किन्तु ऐसा करना उन्हीं व्यक्तियों को योग्य है जो तीव्र वैराग्यवान हों, और स्वयं को इन कार्यों में लगाये रखने की इच्छा, क्षमता और योग्यता रखते हों। जो व्यक्ति सामयिक उत्साह के वशीभूत आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करने की प्रतिज्ञा तो कर लेते हैं, किन्तु तीव्र वैराग्य के अभाव में तथा निरंतर कर्मशीलता की अदामता के कारण वे आन्तरिक रूप से इसमें सफलता प्राप्त नहीं कर पाते। बाहर से स्वयं को रोके रखना किन्तु मन में लालसा का बने रहना एक प्रकार का मिथ्याचार है। महाभारत के भीष्मपर्व के गीता पर्व के अध्याय २७ में इस प्रकरण में लिखा है-

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य ये आस्ते मनसा स्मरण।
इन्द्रियार्थान् विमूढात्मा मिथ्याचार: स उच्यते।।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने भी 'सत्यार्थ प्रकाश' के तृतीय समुल्लास में लिखा है-जो विवाह करना ही न चाहें वे मरणपर्यन्त ब्रह्मचारी रह सकते हों, तो भले ही रहें। परन्तु यह काम पूर्ण विद्यावाले, जितेन्द्रिय और निर्दोष योगी पुरुष का है। यह बड़ा कठिन काम है, जो काम के वेग को थाम के इन्द्रियों को अपने वश में रखना। इसलिये सुयोग्य जनों को ही यह व्रत लेना चाहिये। अतएव अति योग्य अपवादों को छोड़ कर सब गृहस्थाश्रम में प्रविष्ट हों और कर्तव्य-परायणतापूर्वक गृहस्थाश्रम में सफल होकर अपना जीवन धन्य करें।

वेद के संबंध में महापुरुषों के विचार

❑**नरेश सिहाग बोहल एडवोकेट**, सहसम्पादक, शांतिधर्मी
गुगन निवास, २६ पटेल नगर, भिवानी-१२७०२१ हरियाणा

वेद परमात्मा द्वारा प्रदत्त दिव्य ज्ञान है। वेद वैदिक संस्कृति के मूलाधार हैं। यह ज्ञान परमेश्वर ने सृष्टि के आदि में मानव मात्र के कल्याण के लिए दिया था। वेद का ज्ञान आबाल-वृद्ध, नर-नारी सभी के लिए है। वेद आर्यों के साहित्य का अक्षय स्रोत है। वेद परमात्मा का अमर काव्य है। वेद चार हैं। वेद का ज्ञान, अग्नि, वायु, आदित्य और अङ्गिरा इन चार ऋषियों को परमात्मा द्वारा मिला था। चारों वेदों में क्रमशः ऋग्वेद १०५८९, यजुर्वेद १९७५, सामवेद १८७५, अर्थवेद में ५९७७ मंत्र हैं। कुल संख्या २०३४८ है। ये मंत्र गायत्री आदि छंदो में हैं।

वेद को सनातन काल से ही सर्वोपरि प्रमाण स्वीकार किया जाता रहा है। सनातन काल से ही आप्त पुरुषों, ऋषियों, मुनियों, शास्त्रकारों व सभी अन्य विद्वानों ने एकमत से वेद की महत्त्व को स्वीकार किया है। आइये जानते हैं कुछ महापुरुषों के विचार-

मनु महाराज के विचार :

'वेदोऽखिलोधर्ममूलम्'(मनु २-६)

अर्थात् सम्पूर्ण वेद तो धर्म का मूल आदि स्रोत है।

'धर्म जिज्ञासमाज्ञानानां प्रमाण परमं श्रुति' (२:१५)

अर्थात धर्म के सत्यस्वरूप को जानने की इच्छा रखने वालों के लिए पवित्र श्रुति वेद ही परम प्रमाण है।

'नास्तिको वेदनिन्दक' (२-११)

अर्थात् नास्तिक वही कहलाता है जो वेद की निन्दा करता है।

'वेदचक्षुः सनातनम्' (१२-९४)

अर्थात सचमुच वेद ही भूत, वर्तमान और भविष्य गर्भित सत्य तत्त्वों का दर्शक दर्पण है।

'सर्वज्ञानमयो हि सः' (२-७) अर्थात् वेद विविध ज्ञान का अक्षय कोष है।

कपिल मुनि के विचार :-

महर्षि कपिल को पाश्चात्य एवं उनका अन्धानुकरण करने वाले भारतीय विद्वान् नास्तिक कहते हैं, यह खेद का विषय है, क्योंकि ईश्वर और वेद के विरोधी को नास्तिक कहा जाता है। महर्षि कपिल ईश्वर और वेद दोनों पर पूर्ण श्रद्धावान् दिखाई देते हैं। उनके सांख्यशात्र के पंचमाध्याय में स्पष्ट लिखा है- 'स हि सर्ववित् सर्वकर्ता' निःसंदेह वह ईश्वर सर्वज्ञ और समस्त लोक-लोकान्तरों का रचयिता है।

पुनः मुक्ति प्राप्ति के साधनों पर विचार करते हुए लिखा है कि 'ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः।।' अर्थात् बिना ब्रह्मज्ञान के मुक्ति प्राप्ति सर्वथा असम्भव है।

'न पौरुषेयत्वं तत्कर्तुः पुरुषस्याभावात् (१५-१४) अर्थात् वेद अपौरुषेय हैं, पुरुष विशेष की रचना नहीं; क्योंकि उसके रचयिता किसी पुरुष के नामोल्लेख का उस पर चिह्न तक नहीं मिलता।

'निजशक्त्यभिव्यक्तेः स्वतः प्रामाण्यम्' (१५-५)

अर्थात् परमेश्वर की जो स्वाभाविक विद्या शक्ति है, उससे वेद प्रकट होने से यह नित्य और स्वतः प्रमाण है।

महर्षि कणाद के विचार :-

'तद वचनादामाम्नायस्य प्रामाण्यम्' (१-१-३)

अर्थात् वेद ईश्वरीय वाणी होने के कारण नित्य एवं स्वतः प्रमाण है।

'बुद्धिपूर्वा वाक्कृति वेदे'

अर्थात् वेदों की जो वाक्य रचना है, वह सर्वथा बुद्धि, ज्ञान और युक्ति युक्त है।

महर्षि व्यास के विचार :-

'शास्त्रयोनित्वात्' (१-११-३)

अर्थात् सूर्यवत् सर्व सत्यार्थ प्रकाशक एवं अनेक विद्याओं से युक्त ऋगादि वेद चतुष्टय का कारण सर्वज्ञादि गुणविशिष्ट परमेश्वर ही है।

गौतम मुनि के विचार :-

'मन्त्रायुर्वेद प्रामाण्यवच्च तत्प्रामाण्यमाप्त प्रामाण्यात्'
(२-१-६९)

अर्थात् ब्रह्मा आदि सब आप्त जन वेदों को नित्य मानते आये हैं। अतः वेदों को आयुर्वेद की भाँति धर्माधर्म के विषय में प्रामाणिक एवं नित्य ही सब मनुष्यों को मानना चाहिए।

पुराण रचयिता के विचार :-

'वेदेन विहितं कर्म तन्मन्ये मंगलापुरम्।
अवैदिकं तु यत्कर्म तत्तदशुभमेव च' (ब्रह्मवैवर्तपुराण)

अर्थात् वेदविहित कर्मानुष्ठान ही मंगलकारी है और जो वेदविरुद्ध कर्मानुष्ठान है, वह सर्वथा अशुभ और अहितकर है।

'न हि वेदात्परं शास्त्रम्' (गरुड़ पुराण)
अर्थात् वेदों से उत्तम कोई अन्य शास्त्र नहीं है।

'सारभूताश्च शास्त्राणां वेदाश्चत्वार एव च (भागवत्पुराण)

अर्थात् सब शास्त्रों में सार रूप कोई शास्त्र है तो केवल चार वेद ही हैं।

भागवत रचयिता के विचार :-

'परोक्षवादी वेदोऽयं बालानाम्।। (शासनम् भागवत)

अर्थात् जो यह कहते हैं कि वेदों में परोक्ष की बातें हैं, वे सर्वथा अज्ञानी हैं, वे वेदों की शैली व शिक्षा से अनभिज्ञ हैं।

उपनिषद के विचार :-

'वेदा हि रसाः वेदा ह्यमृताः (छान्दोग्य ३-५-४)

वेद ही रस, वेद ही अमृत।

महाभारत रचयिता के विचार :-

'नास्ति वेदात्परं शास्त्रम्।। (अ० १०६-६५)

अर्थात् वेद से बढ़कर कोई शास्त्र नहीं।

'अधीत्य सर्ववेदान् वै सद्यो दुःखाद् विमुच्चते' (७-२०)

अर्थात् जो सम्पूर्ण वेदों का अध्ययन कर लेता है, वह तत्काल दुःख से मुक्त हो जाता है।

अप्रामाण्यं च वेदानां शास्त्राणां चाभिलंघनम्।
अव्यवस्था च सर्वत्र एतन्नाशनमात्मनः।। (३७-११)

अर्थात् वेदों को अप्रामाणिक मानना, शास्त्र की आज्ञा की उल्लंघन करना तथा सर्वत्र अव्यवस्था फैलाना है, ये सब अपना ही नाश करने वाले हैं।

यानीहागम शास्त्राणि याश्च काश्चित् प्रवृत्तयः।
तानि वेदं पुरस्कृत्य प्रवृत्तानि यथाक्रमम् (१२२-४)

अर्थात् इस जगत् में जितने भी शास्त्र और कोई भी प्रवृतियाँ हैं, वे सब वेद को ही सामने रखकर क्रमशः प्रचलित हुए हैं।

महर्षि दयानन्द सरस्वती के विचार :-

जो परमेश्वर वेदों का प्रकाश न करे तो कोई कुछ भी न कर सके, इसलिए वेद परमेश्वरोक्त है, इन्हीं के अनुसार सब मनुष्यों को चलना चाहिए।

वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है।

सिख-मत के गुरुओं के विचार :-

गुरु नानक

देव-दीवा बले अन्धेरा जाइ, वेद पाठ मति पापा खाई।
(सूही की वीर महला)

वेद पुकारे पुन्न पान सुरग नरक का बीऊ
(सारग की वार मः)

गुरु अर्जुन देव-

वेद बखिआन करत साधुजन
भाग हीन समझत नहीं खल (टोडी महला ५)

गुरु गोविन्द सिंह-

पढ़े सामवेद जजुर वेद कथं। रिग वेद पठियं भव हयं। अथर्ववेद पठियं सुणे पाप नठियं। (विचित्र नाटक अ० ४)

मुसलमान विद्वानों के विचार :-

मिर्जा गुलाम अहमद, कादियानी सम्प्रदाय के संस्थापकः-

मैं ईश्वर से डर कर यह स्वीकार करता हूँ कि वेद प्रभु प्रदत्त हैं।

मनुष्य की रचना में ऐसी शक्ति नहीं कि करोड़ों लोगों को अपनी ओर खेंच सके। (पुस्तक 'पैगाम सुलह')

मौलाना सना उल्ला (अहले हदीस सम्प्रदाय के प्रसिद्ध लेखक):-

वेद ईश्वर की वाणी है। (पुस्तक 'तफसीरे सनाई')

खाजा हसन निजामी, (सूफी सम्प्रदाय के प्रसिद्ध विचारक):-

वेद प्रभु की देन कहा है। (पुस्तक 'कृष्ण कथा')

जननी जन्मभूमिश्च

जब श्री रामचंद्र जी ने रावण का वध कर दिया और युद्ध समाप्त होने पर श्री राम लक्ष्मण और सीता माता के साथ अयोध्या को प्रस्थान करने लगे तब लक्ष्मण जी ने प्रभु श्री राम के समक्ष स्वर्णनगरी लंका की भव्यता पर मोहित होकर कुछ और दिन विभीषण राज में लंका में प्रवास व लंका दर्शन की इच्छा प्रकट की। परन्तु श्री राम ने स्पष्ट ही मना करते हुए कहा-

अपि स्वर्णमयी लंका न मे लक्ष्मण, रोचते।
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।।

अर्थात् यह स्वर्णनगरी लंका तनिक भी मेरा मन नहीं मोह सकती, मुझे तो केवल जन्म देने वाली माता और जन्म देने वाली भूमि ही स्वर्ग के समान प्रिय है।।

-आदित्य आर्य

दयानन्द-वेदभाष्य एक अध्ययन

❒मनुदेव 'बन्धु'

दयानन्द का वेदभाष्य यास्क की मान्यताओं को स्वीकार करता है। देव-दृष्टि को समझाते हुए यास्क ने अपनी त्रिविध देवपरिकल्पना में तीन स्तरों की क्रमशः आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक रूप में जो कल्पना की है, उसे अग्नि, पर्जन्य आदित्यादि के भेद से समझाते हुए वे अन्त में वैश्वानर के रूप में एक ही परमदेव स्वीकार करते हैं। अपने युग के अज्ञानान्धकार को देखते हुए ऋषि दयानन्द ने आध्यात्मिक दृष्टि से एक ही महादेव परमात्मा को स्वीकार किया और आध्यात्मिक अर्थ में अग्नि, इंद्र आदि का अर्थ व्याकरण और निरुक्त के आधार पर परमात्मा की ही विविध शक्तियों के उद्घोषक के रूप में स्वीकार किया। अतः एकेश्वराद या महादेववाद को ही ऋषि की निष्ठा का आधारभूत सत्य कहा जा सकता है। निस्संदेह यास्क की भाँति व्याकरण के परम पण्डित होकर ही दयानन्द निरुक्त या निर्वचन पद्धति का आश्रय व्याकरण के प्रमुख अंग के रूप में मान कर ही आगे बढ़ रहे थे।

वेदभाष्य में प्रवृत्ति क्यों हुई ?

जहाँ मध्ययुगीन भाष्य से दयानन्द विचलित थे और सच्चे ईश्वर के स्वरूप को जानने की उत्कण्ठा से व्यग्र थे, वहाँ उनके गुरु विरजानन्द अपनी प्रज्ञा से इस तथ्य को पाकर अत्यन्त खिन्न थे कि महान् वैयाकरण माधव एवं उनके परम वेदविद् भ्राता सायण, दोनों ने ही जिस वेदभाष्य को वेदों के पुनरुद्धार की भावना से पूर्ण किया, उसमें न तो व्याकरण की पूर्ण रक्षा हुई और न ही यास्क की आर्ष-पद्धति को पूर्णतः अपनाया गया। अतः उन्होंने ऋषि को जो दृष्टि दी, वह जहाँ ऋषि की मूल जिज्ञासा को शान्त करने वाली थी, वहाँ बुद्धयुग से लेकर मध्ययुग तक परिव्याप्त ईश्वर संबंधी अवैदिक एवं अनार्ष धारणाओं पर आश्रित सायण, माधव, महीधर और उव्वट आदि की त्रुटियों को भी उद्घाटित करने वाली थी। सम्भवतः इसका कारण इन विद्वानों का समसामयिक परिस्थितियों से प्रभावित अनार्ष एवं परवर्ती ग्रंथों पर आश्रित रहना था तथा साथ ही साथ स्वानुभूति एवं धर्म साक्षात्कार का अभाव था। अतः वेदोद्धार की चिन्ता होने पर भी किसी मूल निष्ठा एवं व्यग्रता से परिचालित न होने के कारण वे अपने कर्त्तव्य की इतिश्री केवल व्याकरण के आश्रय पर ही मान बैठे।

सम्भवतः दयानन्द का आक्रोश उनके प्रति इतना न होता और वे भी अपना वेदभाष्य बिना किसी सिद्धान्त के कर देते, यदि उन्हें इससे होने वाला एक अन्य कुपरिणाम बहुत भयंकर रूप में व्यथित न कर रहा होता। वे यह देख रहे थे कि सायणादि ने व्याकरण मात्र को दृष्टि में रखकर अग्नि, सूर्यादि से संबंधित मंत्रों का जिस प्रकार अर्थ किया, उसको ही पढ़कर जो पाश्चात्य विद्वान् मैक्समूलर आदि वेदभाष्य में प्रवृत्त हो रहे थे, वे अपने अधकचरे व्याकरण ज्ञान के आधार पर उसमें भी और भी भौतिकवादी संशोधन कर रहे थे तथा प्रतीकात्मक और वेदमंत्रों की लाक्षणिकता से आपूर्ण-उक्तियों को भी सामान्य बोलचाल की बातें मात्र सिद्ध कर रहे थे। इसी का परिणाम यह है कि उन्होंने सायण आदि की मूल भावना को बिना समझे वेदों को बहुदेववादी, वैदिक ऋषियों को जड़देव उपासक एवं वैदिक उपासना पद्धति को परवर्ती दूषित कर्मकाण्ड पर आधारित मात्र सिद्ध कर दिया है। इस प्रकार उन्होंने एक नया काम यह किया है कि जहाँ सायण आदि ने अपनी बुद्धि से वैज्ञानिक एवं आधुनिक दृष्टि से चमत्कारपूर्ण रहस्यों को सामान्य तथ्यों की भांति उद्घोषित किया था वहाँ उन्हें इन पाश्चात्य विद्वानों ने मूर्खताजन्य कल्पना-मात्र घोषित करके

सर्वथा नये, अज्ञानपूर्ण एवं अवनतिपरक अर्थों की अभिव्यक्ति की। परिणामत: जहाँ एक ओर वे भारत के अतीत को मानवता की प्रथम सर्वोच्च निधि घोषित कर रहे थे, वहाँ दूसरी ओर उन्होंने वेदों को सचमुच ही ''गडरियों के गीत'' जैसी वस्तु घोषित कर दिया। इस पर भी विडम्बना यह है कि व वे सायण आदि को ही अपना मूल स्रोत एवं उद्घोषित करते रहे। दयानन्द इस बात से व्यथित थे।

एक और जहाँ वे सायण के व्याकरण ज्ञान के अत्यधिक प्रशंसक थे, दूसरी ओर उन्हें यह दु:ख था कि सायण भी उनकी भाँति यास्कीय एकात्मवाद या महादेववाद से क्यों परिचित नहीं थे। उन्हें यह भी दु:ख था कि सायण विज्ञान के केवल उन्हीं तथ्यों को उद्घाटित कर पाये जो उनके युग तक किसी न किसी भाँति सत्य और मान्यता को प्राप्त हो सकते थे। उन्होंने युग से ऊपर उठकर वेद में वर्णित तथ्यों को वैदिक तथ्यों की भांति यथावत् रूप में क्यों प्रकट नहीं किया। ये ही सब कारण थे जिनसे दयानन्द वेदभाष्य में प्रवृत्त हुए।

ऋग्वेदादि-भाष्य-भूमिका में वे अपनी वेदभाष्य पद्धति का आधार इस श्लोक में वर्णित करते हैं-

आर्याणां मुन्यृषीणां या व्याख्यारीतिः सनातनी।
तां समाश्रित्य मन्त्रार्था विधास्यन्ते नु नान्यथा।।

भाष्य-शैली का आधार

उनके वेद-भाष्य को पढ़ते हुए यदि उक्त बातों को हम ध्यान में रखें तो यह स्पष्ट होगा कि व्याकरण, इतिहास, कर्मकाण्ड आदि की दृष्टि में जो अशुद्धियाँ समझी जाती हैं, वास्तव में वे ही उनकी भाष्य शैली की पृथकता एवं एकात्मकता की प्रतीति हैं। उनका वेदभाष्य केवल मन्त्रों के शाब्दिक अर्थ तक ही सीमित नहीं है, बल्कि वह एक समग्र भावना से जन्म लेने वाला तथ्य है। परम व्याकरणवित् होने के कारण ऋषि स्फोट में विश्वास रखते थे और मन्त्रार्थ का वह स्फोट उनके हृदय में जिस भी रूप में हुआ, व्याकरण निरुक्त आदि की सहायता से तत्रस्थ शब्दों का शाब्दिक या पदगत अर्थ भी उन्होंने उसी को व्यक्त करने के लिए उससे संबंध रूप में कर दिया। यही कारण है कि हम कारक आदि के परम्परागत अर्थों को वहाँ न पाकर एक समग्र तथ्य के अंगभूत रूप में पाते हैं।

भाष्य शैली के मूलाधार ग्रंथ ऋग्वेदादि-भाष्य-भूमिका, ऋग्वेद-भाष्य, यजुर्वेद-भाष्य, सत्यार्थ प्रकाश, संस्कारविधि आदि हैं। भाष्य की मूल भावना एकेश्वरवाद और त्रैतवाद में विश्वास, परब्रह्म के निराकार, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी होने में निष्ठा और जीव तथा प्रकृति की स्वतंत्र सत्ता एवं शक्तियों में आस्था है।

भाष्य शैली

दयानन्द ने अपने वेदभाष्य में एक ऐसा निश्चित क्रम अपनाया है कि वे स्वयं भी किसी प्रकार की व्याकरणात्मक या अन्य उपेक्षा अपने वेद भाष्य में करने को तैयार नहीं थे।

1. सर्वप्रथम मंत्र का मुख्य विषय देते हैं और संक्षेप में समझाते हैं कि इस मंत्र में इस विषय का प्रतिपादन है।
2. द्वितीय स्थान वे 'पदच्छेद' को देते हैं जो कि पुरातन पद्धति के वेदपाठ का ही रूपान्तर है। इसमें हम यदि कहीं उपलभ्य हो तो उनकी त्रुटि को या पूर्व परम्परा से विभेद को पहचानने में समर्थ हो सकते हैं।
3. तृतीय स्थान वे 'अन्वय' को देते हैं। वास्तव में अन्वय ही मंत्र की मूलस्थ वृत्ति को निश्चित करने वाला है। व्याकरणात्मक रचना एवं वाक्य-विन्यास की परीक्षा का अवसर यहाँ पर भी उपस्थित होता है।
4. दयानन्द की भाष्य शैली का चतुर्थ और अत्यधिक महत्वपूर्ण भाग है 'पदार्थ'। वास्तव में किसी भी भाष्यकार या व्याख्याकार को पदार्थ के प्रसंग में ही अपनी प्रतिभा या मूलभावना दिखाने का अवसर मिलता है। सायण और दयानन्द दोनों ही ऐसा करते हुए व्याकरण एवं निरुक्त या निर्वचन पद्धति का भरपूर आश्रय लेते हैं। अन्तर केवल इतना है कि सायण जहाँ सामान्य लोक-भाषा जैसे अर्थों से ही सन्तुष्ट हो जाते है, वहाँ दयानन्द वेदों की विशिष्ट भूमि को ध्यान में रखते हुए और पूर्वकथित सिद्धान्तों के आधार पर उन्हीं सामान्य शब्दों को विशेष वैदिक दृष्टि में देखते हैं। दयानन्द यह भी मानते हैं कि वेद की प्राचीनतम भाषा की व्याख्या पाणिनि और उसके परवर्ती वैयाकरणों द्वारा किये गए धातुपाठों और धात्वर्थों एवं प्रकृति-प्रत्यय-विभाग मात्र के आधार पर नहीं की जा सकती।

स्वयं सायण ने भी कुछ विशिष्ट स्थलों पर इस तथ्य को स्वीकार किया है। परन्तु यास्क तो स्वयं पाणिनि से बहुत पूर्व हुए थे। असाक्षात्कृतधर्मा ऋषियों के समकालीन होने पर भी वे स्वयं वेद और धर्म का साक्षात्कार कर चुके थे, इसलिए उनके द्वारा दिये गए धात्वर्थ, व्याकरण नियम एवं प्रकृति-प्रत्यय विभाग उनकी स्वतंत्र चेतना एवं तीक्ष्ण प्रतिभा के द्योतक है। उन्होंने प्रातिशाख्यों की व्याख्या पद्धति एवं ब्राह्मण ग्रंथों की व्याख्या पद्धति को भी हृदयंगम किया

था। दयानन्द ने यास्क सहित उक्त सभी पद्धतियों को स्वीकार किया था और जहाँ-जहाँ भी नवीन धातुओं,धात्वर्थों एवं प्रकृति-प्रत्यय आदि की कल्पना की, वह सब उनके इस पूर्वोक्त अध्ययन पर ही आधारित था। अन्तर केवल इतना ही है कि दयानन्द जिस युग में, जिस विद्वद्वर्ग के लिए तथा जिस ज्ञान सामान्य को दृष्टि में रखकर लिख रहे थे, उन सब के लिए यास्क आदि से प्राप्त तथा युगचिन्तन से प्रबुद्ध अपनी भावना को व्यक्त करना उनके लिए सर्वप्रमुख बन चुका था। इसलिए वे इस पदार्थ नामक शीर्षक के अन्तर्गत केवल पदविच्छेद एवं अर्थविच्छेद करके ही संतुष्ट नहीं हो जाते, अपितु भाष्य की पद्धति से उसके पीछे छिपी मूल भावना को भी स्पष्ट करते हैं। इसी कारण कहीं-कहीं उन्हें अन्वय में पूर्वोल्लिखित पदक्रम से भिन्न क्रम को अपनाना पड़ता है तथा कारक आदि के निश्चित विभक्त्यर्थ आदि की परवाह न करके भी प्रकरणानुकूल अर्थ को स्पष्ट करना पड़ता है। वे मन्त्रार्थ या उसके भाष्य को ईकाई मानकर चलते हैं। इसी कारण पदार्थ को महत्त्व न देकर उसे केवल मुख्यार्थ का अंगभूत अंश ही मानते हैं तथा उसी दृष्टि से उसका स्थान और क्रम निश्चित करते हैं। उनका सत्यभाष्य या वेदार्थ इन्हीं पदार्थों में स्पष्ट हुआ है।

5. दयानन्द की भाष्य पद्धति का पञ्चम और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अंश भावार्थ है। पदार्थ करते हुए वे व्याकरण, निरुक्त आदि जिन सीमाओं में चलने को बाध्य होते हैं, भावार्थ में वे उन सबको तिलांजलि दे देते हैं। उस मन्त्र विशेष को पढ़ने या मनन करने पर जो भी दृष्टि, भावना या प्रेरणा उनके सामने जागती है उसे ही वे किसी पद-पदार्थ के बन्धन में पड़े बिना भावार्थ के रूप में प्रस्तुत कर देते हैं। सच तो यह है कि इस भावार्थ को उस मन्त्र विशेष के संबंध में दयानन्द की अपनी टिप्पणी कहा जा सकता है। भाष्य यदि उक्त, अनुक्त और दुरुक्तादि सभी बातों का पर्यालोचन करते हुए बढ़ता है, तब कहना होगा कि दयानन्द भावार्थ के माध्यम से उसी उद्देश्य की पूर्ति में प्रवृत्त होते है। उस दृष्टि में यदि पदार्थ उनके ज्ञान का सूचक है तो भावार्थ उनके मनन और चिन्तन का। दूसरे शब्दों में उनके वेद-भाष्य का अंशभूत यह भावार्थ ही उन्हें सच्चा ऋषि सिद्ध करता है- 'ऋषयो मन्त्रद्रष्टारः'। उनकी सच्ची मन्त्रदृष्टि यहीं पर पूर्णतया व्यक्त हुई है।

इसी प्रसंग में हमारा यह कहना सार्थक होगा कि दयानन्द रूढ़िवादिता के पुजारी नहीं है, क्योंकि दयानन्द ने एक ही मन्त्र का विविध ग्रंथों में विभिन्न प्रकार से भाष्य किया है। इससे यह भी सिद्ध होता है कि वेद में क्वापि पुनरुक्ति दोष नहीं है।

यह भी उल्लेख कर देना आवश्यक है कि दयानन्द केवल ईश्वरपरक अर्थ करने को भी सच्ची वेदभावना नहीं मानते थे। वे स्पष्टत: वैदिक विषयों अपि वा देवताओं के तीन स्वरूप मानते हैं (1) आधिभौतिक, (2) आधिदैविक, (3) आध्यात्मिक। अत: वे यह संभावना मानकर चल रहे थे और ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिका और सत्यार्थप्रकाश में उन्होंने इस बात की बार बार घोषणा की है कि अनेकत्र एक ही मन्त्र का अर्थ और उसकी व्याख्या अनेक दृष्टियों से या उक्त तीनों दृष्टियों से की जा सकती है। इनमें से एक दृष्टि भी अनेक भेदों से भिन्न हो सकती है। यथा-आध्यात्मिक दृष्टि से व्याख्या करने पर एक ही मन्त्र परमात्मा और जीवात्मा के प्रसंग में भिन्न-भिन्न अर्थों में व्याख्यात किया जा सकता है। यही बात अग्नि आदि के आधिदैविक अर्थों में संबंध में भी है। प्रथम दृष्टि से अग्नि और इंद्र आदि परब्रह्म और जीवात्मा आदि के लिए यथाप्रसंग स्थित रहते हैं, तो दूसरी ओर आधिदैविक रूप में अतिथि, संन्यासी, पर्जन्य, रतनयित्नु आदि के रूप में भी। इन सब दृष्टियों और सम्भावनाओं को सामने रखकर तथा यथासम्भव उत्तमोत्तम ज्ञान की उपलब्धि करके ही वेदार्थ में प्रवृत्त होना चाहिए। वे वेद को परमेश्वरीय और नित्य ज्ञान मानते हैं। उसे सभी प्रकार के सम्भव ज्ञान की अपेक्षा उच्चतर एवं पूर्णतर ज्ञान का भण्डार मानते हैं। इसलिए वास्तविक भाष्य आरंभ करने से पूर्व उन्होंने एक-एक मंत्र के अनेक प्रकार के अर्थों से युक्त भाष्य के कुछ नमूने छापकर विद्वद्वर्ग में वितरित किये थे, परन्तु साथ ही यह भी घोषित किया था कि सभी वेदमंत्रों का इस प्रकार भाष्य करने में अत्यन्त श्रम, समय, धनादि की आवश्यकता होगी जो कि उनके लिए जुटा पाना असम्भव सा था। इसलिए प्रमुखत: आध्यात्मिक दृष्टि को लक्ष्य में रखकर और जहाँ अनिवार्य दिखाई दे, वहाँ अन्य दृष्टियों से वेदार्थ और वेदभाष्य करने में ही वे प्रवृत्त हुए। परन्तु भाष्यभूमिका में यह सुस्पष्ट उल्लेख किया है कि इतने से यह न समझ लेना चाहिए कि वेद का भाष्य उनके अर्थ के अतिरिक्त और कुछ हो ही नहीं सकता या किया ही नहीं जा सकता। दयानन्द अपने भाष्य के माध्यम से तो एक दिशा निर्देश मात्र दे रहे थे ताकि भारत और पश्चिम के विद्वान सही देख सकें और इस गुरुतर कार्य को अपने सामर्थ्य के अनुसार वहन कर सकें।

जीवन यात्रा

❑राज कुकरेजा
786/8, करनाल-132001 हरियाणा

जन्म से मत्यु-पर्यन्त का काल जीवन है। आत्मा का शरीर के साथ संयोग जन्म है। जन्म की व्याख्या ऋषि दयानन्द सरस्वती जी उपदेश-मंजरी (पूना-प्रवचन) में करते हैं कि शरीर के व्यापार और क्रिया करने योग्य परमाणुओं का संघात जब होता है तब जन्म होता है, अर्थात् सब साधनों से युक्त होकर क्रिया-योग्य जब शरीर होता है, तब जन्म होता है। सारांश यह है कि इन्द्रिय, प्राण और अन्त: करण ये शरीर के मध्य जब उपयुक्त होते हैं, तब जन्म होता है।

जन्म अर्थात् शरीर और जीवात्मा इनका संयोग। शरीर और जीवात्मा इनका वियोग मरण अर्थात् मृत्यु कहलाता है। आत्मा सत् चित् स्वरूप है, आत्मा शरीर नहीं है। आत्मा नित्य, अजर, अमर है। यह शरीर आत्मा का निवास स्थान है। आत्मा का अपना कोई रूप-रंग व आकार नहीं है, जैसा शरीर धारण करता है, वैसा ही दिखने लगता है। शरीर का मिलना अपने किये शुभ-अशुभ कर्मों के फलस्वरूप होता है। हमारे कर्मों के अनुसार ही हमें मानव शरीर मिला है। शरीर का स्वरूप, बुद्धि, स्वास्थ्य आदि भी जो प्रभु प्रदत हैं, वे हमारे पिछले कर्मों के अनुसार हैं। ऋषि पतंजली जी योग दर्शन में स्पष्ट करते हैं कि कर्मों का फल जाति, आयु, और भोग रूप में मिलता है। जाति अर्थात् मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट आदि शरीर का मिलना। आयु अर्थात् इस शरीर के अनुसार जीवन काल। भोग का अर्थ इस शरीर के अनुसार भोग्य पदार्थों की प्राप्ति। यह जाति, आयु और भोग, शुभ और अशुभ कर्मों से उत्पन्न होने के कारण सुख और दु:ख रूपी फल वाले होते हैं। अर्थात् पुण्य कर्मों से मनुष्य को सुखदायक जाति, आयु और भोग मिलते हैं। पाप कर्मों से पशु, पक्षी आदि के दु:खदायक शरीर मिलते हैं।

मानव जीवन का मुख्य लक्ष्य भी ऋषि लोगों ने जो निर्धारित किया है, उसकी पूर्ति भी जीवन काल में सम्भव है। मानव जीवन का उद्देश्य है- धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति। धर्म-जो सत्य व न्याय का आचरण है। अर्थ- जो धर्म से पदार्थों की प्राप्ति करना है, काम-जो धर्म और अर्थ से इष्ट पदार्थों का सेवन करना है, और मोक्ष-जो सब दु:खों से छूट कर पूर्ण आनन्द में रहना है। प्रत्येक मनुष्य को तीन ऋणों से मुक्त होना अनिवार्य है जो इस जीवन काल में होना ही सम्भव है। पितृ ऋण, देव ऋण और ऋषि ऋण। प्रथम ऋण तो संतानोत्पत्ति के द्वारा अपनी वंश परम्परा को संचालित रखने से पूरा होता है। दूसरा देव ऋण संध्या, उपासना और यज्ञ आदि पुण्य कर्मों के करने से पूरित होता है। अंतिम तीसरा ऋषि ऋण, वेदादि शास्त्रों का पढ़ने-पढ़ाने से और उससे सम्बन्धित संस्थाओं को यथा- सम्भव सहयोग करके व्यक्ति इन ऋणों से मुक्त हो सकता है।

ऋषियों ने जीवन काल को चार भागों में बांटा है। ये जीवन काल के चार पड़ाव हैं। प्रथम ब्रह्मचर्य आश्रम है। यह आश्रम विद्या अध्ययन का काल माना गया है। दूसरा गृहस्थ आश्रम जिसमें विवाह संस्कार, संतानोत्पत्ति और सन्तान का लालन-पालन मुख्य कर्तव्य माना गया है। तीसरा आश्रम वानप्रस्थ- जिसमें व्यक्ति, जब सन्तान की सन्तान उत्पन्न हो जाए, पारिवारिक उत्तरदायित्वों से निवृत होकर अर्थात् पारिवारिक उत्तरदायित्वों का भार सन्तान को सौंप कर, वस्त्रादि सब उत्तमोत्तम पदार्थो को छोड़, दृढ़ इन्द्रिय होकर वन में जा कर वसे। वानप्रस्थी होकर नाना प्रकार की तपश्चर्या, सत्संग, योगाभ्यास और सुविचार से ज्ञान और पवित्रता प्राप्त करे। पश्चात् संन्यास ग्रहण करे। संन्यासी को उचित है कि परिव्राजक बनकर सारे जगत् में घूमे और सत्य-विद्या का सदुपदेश करे।

ईश्वर की असीम कृपा से प्रत्येक जीव कर्म करने में स्वतंत्र है। जीवन यात्रा में जीव अपना मार्ग स्वयं चयन करता है। यात्रा के दो ही मार्ग हैं- प्रेय मार्ग और श्रेय मार्ग। ये दोनों बिल्कुल विपरीत हैं। पृथक्-पृथक् फलों को देने वाले हैं। प्रेय मार्ग : जो इन्द्रियों को प्रिय है। अर्थात् संसार के सभी भोग्य पदार्थ जो विभिन्न प्रकार के दु:खों से युक्त, विकारी, अनित्य और क्षणिक-सुखदायी हैं, उनमें सुख की भावना रखना। सबसे बड़ी भूल मनुष्य करता है कि भौतिक उपलब्धियों को

प्राप्त करना अपने जीवन का उद्देश्य मान लेता है। परिणामस्वरूप उपलब्धियों को प्राप्त करके और तृष्णा लालसा को बढ़ा लेता है जिससे मनुष्य को अतृप्ति, असंतोष, भय, परतन्त्रता और दु:ख ही हाथ लगता है। तृष्णा के स्वरूप का श्री भर्तृहरि वैराग्यशतक में बड़ा सुंदर वर्णन करते हैं-

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ता: तपो न तप्तं वयमेव तप्ता:।
कालो न यातो वयमेव याता:, तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा: ।।

भाव है कि हम सांसारिक विषय भोगों का उपभोग नहीं करते, अपितु भोग ही हमको भोगते हैं। हमने तप नहीं किया, बल्कि तीनों ताप (आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक) जीवन भर हमें ही तपाते रहे। भोगों को भोगते-2 काल को हम नहीं काट पाए, काल ने हमको ही नष्ट कर दिया। तृष्णा तो बूढ़ी नहीं हुई, हम ही बूढ़े हो गये।

श्रेय मार्ग यह आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग है। श्रेय पथ पर मनुष्य तृष्णा लालसा को समाप्त कर सकता है। ये सब भौतिक पदार्थ हमारे लिए साधन मात्र हैं, हम इनके लिए नहीं, ये हमारे लिए बने हैं। हमें इनका दास नहीं होना चाहिए, प्रत्युत् हमें महान उद्देश्य व लक्ष्य की प्राप्ति के लिए इन्हें अपना सहायक समझ उचित सीमा तक इन साधनों का प्रयोग करना चाहिए। जब ऐसा बोध हो जाता है, तब सीधा अध्यात्म का मार्ग खुल जाता है। इस श्रेय मार्ग पर प्रगति करता हुआ जीव मोक्ष का अधिकारी बन जाता है। कठोपनिषद् में यमाचार्य नचिकेता को उपदेश देते हैं कि एक श्रेय मार्ग है, दूसरा प्रेय मार्ग है। दोनों के लक्ष्य पृथक्-पृथक् हैं। ये दोनों पुरुष को बांधते है। इनमें से जो श्रेय का अवलम्बन करता है, उसका कल्याण होता है। जो प्रेय को चुनता है, वह असली उद्देश्य से गिर जाता है। श्रेय और प्रेय दोनों मनुष्य को प्राप्त होते हैं। बुद्धिमान् परीक्षा करके उनमें भेद करता है। बुद्धिमान् प्रेय की अपेक्षा श्रेय को चुनता है, किन्तु मंदबुद्धि मनुष्य योग-क्षेम देने वाला होने से प्रेय को अधिक पसंद करते हैं। प्रेय मार्ग में पड़े हुए मनुष्य स्वयं को बुद्धिमान् और पंडित मानने लगते हैं परन्तु यही मूढ़ जन होते हैं, ये अंधे से ले जाए जाते हुए अंधों की तरह ठोकरें खाते हुए मारे-मारे फिरते हैं अर्थात् जन्म और मृत्यु के चक्र में पिसते रहते हैं।

हमारे ऋषि-मुनियों ने और धार्मिक शास्त्रों ने इस तथ्य को स्वीकार किया है कि ज्ञान के कारण ही मनुष्य को संसार में सर्वश्रेष्ठ प्राणी का गौरव मिला है और मनुष्य जीवन अनेक पुण्यों का फल है, इसलिए मानव जीवन दुर्लभ है और अमूल्य है। मनुष्य जीवन से बढ़कर और कुछ कीमती नहीं है। मानव जीवन की महत्ता को कवियों ने व भजनोपदेशकों ने कविताओं व भजनों में बड़े ही सुंदर ढंग से पिरोया है।

इस सुंदर नर तन को पाना, बच्चों का कोई खेल नहीं।
जन्म-2 के शुभ कर्मों का, होता जब तक कोई मेल नहीं।।

हम समय रहते उठें, जागें और स्वयं को सम्भालें तथा अपने महान ऋषि-मुनियों के प्रशस्त मार्ग का अनुसरण करें, जिन्होंने अपनी जीवन यात्रा को बड़ी समझदारी से, सावधानी से, ज्ञानपूर्वक, जागरूकता और उद्देश्यपूर्ण ढंग से पूर्ण किया और सम्पूर्ण विश्व के प्रकाश स्तम्भ बन गये। बुद्धिमान् लोग उनकी जीवनयात्रा से प्रेरित और लाभान्वित हो रहे हैं। जीवन प्रवाह को धीरे-धीरे भौतिक जगत् से अध्यात्म की ओर मोड़कर जीवन यात्रा में अगली यात्रा के लिए सुखद सामान जुटाने का प्रयास कर रहे हैं। हम अपने जीवन-काल में कुछ ऐसे सत्कर्म जरूर कर लें कि मृत्यु के बाद हमारी आत्मा की शान्ति के लिए दूसरों को शान्ति सभाएं व प्रार्थनाएं न करनी पड़ें। दूसरों के द्वारा की गई प्रार्थनाएँ हमारे बिल्कुल भी काम आने वाली नहीं हैं। अपना किया हुआ काम व दान ही काम आता है। मन की भूमि पर ऐसे बीज न बोयें कि कल फसल काटते समय आंसू बहाने पड़ें।

जीवन का प्रारम्भ जन्म से होता है तो अंत मृत्यु से होता है। जन्म और मृत्यु यह दोनों जीवन के दो छोर हैं। एक प्रारम्भ तो दूसरा अंत। मृत्यु से पूर्व अपने जीवित काल में ही शुभ-अशुभ, पुण्य-पाप कर्म करने में हम स्वतंत्र हैं परन्तु मृत्यु के उपरान्त ईश्वर की न्याय व्यवस्था में बंध जाते हैं और किये हुए कर्मों का फल कर्त्ता को ही भोगना होता है। ऋषि दयानन्द सरस्वती जी सत्यार्थप्रकाश के सप्तम समुल्लास में लिखते हैं कि अपने सामर्थ्यानुकूल कर्म करने में जीव स्वतंत्र, परन्तु जब वह कर्म कर चुकता है, तब ईश्वर की व्यवस्था में पराधीन होकर फल भोगता है।

जीवन का सार यह है कि ईश्वर ने अति चंचल, नश्वर संसार में हम जीवों की स्थिति की है। उसमें भी पत्ते के तुल्य शीघ्र गिर जाने वाले शरीर में हमारा निवास कराया है। ऐसे नश्वर संसार और क्षण भंगुर शरीर में रहते हुए भी संसार और शरीर को नित्य अविनाशी जान कर हम जीव जगतपति प्रभु को भुला देते हैं। संसार में ऐसे फंस जाते हैं कि ईश्वर की वेद वाणी में रूचि नहीं रखते और न ही वेदवेत्ता महात्माओं के संग में ही श्रद्धा रखते हैं।

सत्संग करें, वेदवाणी पढ़ें-सुनें और व्यवहार में लायें। प्रेम से ईश्वर की भक्ति करके अपना लोक-परलोक सुधारें।

भरोसा कर तू ईश्वर पर, तुझे धोखा नहीं होगा।
यह जीवन बीत जाएगा, तुझे रोना नहीं होगा।।

स्वास्थ्य-चर्चा

आयुर्वेद में तिल के प्रयोग

❑संजय कुमार,
1904 GF सैक्टर-8 कुरुक्षेत्र-136118

तिल को पूरे भारत में तिल के नाम से जाना जाता है। जब तिल खरीदें तो यह कह कर खरीदें कि काले तिल खाने के लिए चाहिएँ न कि पूजा या हवन के लिए। साफ काले तिल हर दुकान पर नहीं मिलते। पूजा के लिए बेचे जाने वाले काले तिल खाने के लिए उपयोगी नहीं हैं। जिस तिल में कीड़ा हो या घुन लगा हो, वह भी न लें। यदि अच्छा काला तिल न मिले तो सफेद या लाल तिल ले सकते हैं। तिल को उपयोगी बनाने के लिए तिल को पानी से धो कर अच्छी तरह से सुखा लेना चाहिए। यहाँ बताए गए प्रयोगों के लिए तिल को न भुनें। केवल कच्चे तिल ही गुणकारी हैं।

आयुर्वेद के मतानुसार तिल बलवर्धक, केशों के लिए हितकर, स्तन में दूध बढ़ाने वाले, व्रण रोपक (घाव को तेजी से भरने वाले), चर्मरोग में हितकारी, दन्त-रोग नाशक, कब्ज करने वाले, वातनाशक और बुद्धिवर्धक होते हैं। (वनौषधि चंद्रोदय के अनुसार)

किसे तिल नहीं खाने चाहिएँ

1- गर्भवती स्त्री को तिल से बना हुआ कुछ भी न दें। परंतु बच्चा पैदा होने के कुछ दिन बाद (10 दिन बाद) तिल देना गुणकारी है, दूध बढ़ाता है।

2- स्थायी एनीमिया के रोगी को तिल बिलकुल न दें। स्थायी एनीमिया जैसे थेलिसिमिया, एडिसनस डीजीज, परनीसियास एनीमिया, सिक्कल सेल एनीमिया के रोगी को तिल हानिकारक हैं। परंतु परेशान न हों। ये रोग एक लाख में केवल 1 व्यक्ति को होते हैं। चरक संहिता में पांडु रोग में तिल का निषेध किया गया है और मेरा अनुभव भी यही है।

3- पाँच साल से कम उम्र के बच्चों को तिल न दे।

4- अम्लपित्त में तिल का प्रयोग न करें।

प्रयोग:-

1- यह प्रयोग गद निग्रह रसायन तंत्र श्लोक 60 का है। गदनिग्रह आयुर्वेद का प्राचीन तथा अत्यंत विश्वनीय ग्रंथ है। यही बात भावप्रकाश में भी कही गई है।

दिने दिने कृष्णतिलप्रकुञ्च समश्नत शीतजलानुपानम्।
पोषश्शरीरस्य भवत्यनल्पो दृढ़ा भवन्त्यामरणाच्च दंता॥

प्रतिदिन काले तिल चबा कर खा कर ठंडा पानी पीने से शरीर का अच्छी तरह से पोषण होता है, दाँत मजबूत होते हैं और दाँत मृत्यु तक बने रहते हैं। (केवल 1-2 चम्मच ही चबा कर खाएँ, अधिक मात्रा मे अपच करते हैं।)

2- यह प्रयोग आयुर्वेद के मुख्य ग्रंथ सुश्रुत संहिता अर्श चिकित्सा में लिखा है। यही प्रयोग भावप्रकाश, भैषज्य रत्नावली अर्श (बवासीर) चिकित्सा श्लोक 21 में है।

प्रतिदिन काले तिल चबा कर खाकर ठंडा पानी पीने से यह अवश्य बवासीर को नष्ट करता है। यह प्रयोग शरीर को पोषण देता है और इससे दाँत दृढ़ रहते हैं।

(यह प्रयोग उस बवासीर में बहुत लाभ करता है जिसमें मस्सों से खून नहीं बहता और मस्से प्राय: बहुत कठोर और सूखे होते हैं)

3- यह प्रयोग चरक संहिता चिकित्सा स्थान अर्श रोगाधिकार का है। काले तिल के चूर्ण में मक्खन और मिश्री मिलाकर खाने से खूनी बवासीर ठीक होती है और खून बहना बन्द हो जाता है। मक्खन स्वयं घर का बनाया लें। बाजार में 80 प्रतिशत मक्खन कृत्रिम synthetic हैं और तेल से बनाए जाते हैं। अमूल मक्खन असली है परंतु उसमें नमक मिलाया हुआ है।

4- **खांसी में** तिल का प्रयोग- 1 चम्मच तिल, 5-7 दाने काली मिर्च, 10 ग्राम मिश्री या गुड़। इन्हें 150 ग्राम पानी में

चाय की तरह उबाले। जब अच्छी तरह उबल जाए तो छान कर गर्म ही पी लें। इसके 1 घण्टे तक ठण्डा पानी न पीएँ। सूखी खांसी में बहुत लाभ होता है। लगभग 7 दिन तक प्रतिदिन 2 समय लें।

5- एक विशेष प्रयोग

साफ तिल 100 ग्राम, मिश्री 100 ग्राम, भृंगराज चूर्ण 100 ग्राम (व्यास कम्पनी का मिल जाएगा) आंवला रसायन (पतंजली) 100 ग्राम मिलाकर रख लें। 1 चम्मच सुबह खाली पेट पानी से लें। इस प्रयोग को कुछ इस तरह भी कर सकते हैं। तिल के अतिरिक्त सभी वस्तुओं को मिला कर रख लें। तिल को अलग रख लें। इन दवाओं को एक चम्मच पानी या दूध से लें। तिल को ऊपर से या अलग किसी समय में चबा कर पानी या दूध पी लें। क्योंकि तिल मिलाकर रखने से दवाई में 1 महीने में ही कीड़े हो जाते हैं व लेते समय चूर्ण मे मिला हुआ तिल गले में खारिश पैदा करता है। जवानी में बाल सफेद बाल दोबारा काले हो जाएंगे। आंखों के लिए गुणकारी है, दाँतों का हिलना रुक जाता है। पुरानी कब्ज में लाभ होता है, शरीर की रोग प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती है तथा आलस्य दूर होता है। सभी मौसम में प्रयोग कर सकते हैं।

6- बार बार पेशाब आना।

तिल 50 ग्राम, अजवायन 20 ग्राम, गुड़ 100 ग्राम। तिल और अजवायन को पीस लें। गुड़ मिला कर रख लें। आधा चम्मच सुबह शाम पानी से लें। जिन्हें रात को बार बार पेशाब के लिए उठना पड़ता है वे रात को सोने से पहले 1 चम्मच मिश्रण पानी से लें। छोटे बच्चे जो बिस्तर में पेशाब करते हैं, उन्हें आयु के अनुसार एक चौथाई चम्मच से आधा चम्मच रात को सोते समय पानी से दें। रात को दूध न पिएँ। 3 साल से कम के बच्चे को न यह न दें।

7- पेट की गैस में तिल:-

धुले हुए (छिलका हटाए हुए) तिल 100 ग्राम, गुड़ 50 ग्राम, सोंठ 25 ग्राम मिलाकर पीस लें। 1 चम्मच दिन में 2 बार गरम दूध से लें। पेट की गैस जो किसी भी दवाई से ठीक न हो वह भी इससे ठीक हो जाती है।

8- ताकत के लिए:-

शरीर में कैल्शियम की कमी पूरी करता है। जिन्हें पेट मे गैस रहती है, भोजन नहीं पचता, उनको बहुत लाभ करता है। विशेष रूप से जिनको बार बार नजला जुखाम हो जाता है, सिर में दर्द रहता है, सारा शरीर सुस्त रहता है, काम में मन नहीं लगता, बच्चों की स्मरण शक्ति कमजोर हो जाती है, दाँत में समस्या है- उनके लिए चमत्कारी है। जो बच्चे को दूध पिलाने वाली माताएँ हैं, उनके लिए बहुत अधिक लाभ करता है। बोर्नविटा, कोम्प्लान, हारलिक्स, कोड लीवर आयल आदि टॉनिक इसके सामने बेकार हैं। सर्दी में प्रयोग करें। जिसे सर्दी मे सुबह निकलना पड़ता है उनके लिए तो अमृत तुल्य है। ठंड नहीं लगेगी। तेज ठंडी हवा व ओस का दुष्प्रभाव नहीं होगा।

विधि:-

बाजार से 250 ग्राम धुले हुए (छिलका हटाए हुए) तिल लें। क्योंकि इन पर कैमिकल लगा होता है इसलिए इन्हें गरम पानी से 3 बार धो लें। उसके बाद इन्हें रात भर पानी में भीगने दें। सुबह निकाल कर पीस ले। फिर लौहे या पीतल की कड़ाही में 100 ग्राम घी में धीमी आग पर अच्छी तरह भून लें। उसके बाद इसमें 250 ग्राम गुड़ कूट कर डालें। जैसे ही कड़ाही में गुड़ पिघल जाए, आग बंद कर दें तथा हिलाते रहें नहीं तो गुड़ चिपक जाएगा। ठंडा होने पर इसमें 50 ग्राम शहद मिलाएँ। शहद गर्म में न मिलाएँ। इच्छा अनुसार इसमें पीस कर छोटी इलायची या केसर मिला सकते हैं।

इनमें से कोई एक ही मिलाए-

(क) विद्यार्थियों के लिए : इसमें 50 ग्राम पीपल (जिसे गरम मसाले में डालते हैं) बारीक पीस कर मिलाएँ। स्मरण शक्ति बढ़ेगी, आलस्य नहीं आएगा। व्यायाम करने की क्षमता (Stamina) बढ़ जाएगी। खिलाड़ियों के लिए भी बहुत उत्तम है।

(ख) पेट की गैस, नजला जुखाम के लिए 50 ग्राम बारीक पीसी हुई सोंठ मिलाएँ।

(ग) ताकत के लिए, हड्डियों की कमजोरी के लिए इसमें 100 ग्राम सितोपलादि चूर्ण (स्वामी रामदेव की दुकान से मिल जाएगा) मिलाएँ।

(घ) जिन्हें हमेशा कब्ज बनी रहती है, सिर भारी रहता है, स्मरण शक्ति कमजोर हो गई है, कानों में सांय सांय की आवाज आती है, आंखों के सामने तारे से टूटते हैं, वे इसमें 50 ग्राम बारीक पीसी हुई दालचीनी मिलाएँ।

प्रयोग का तरीका:- 1-2 चम्मच दिन में 2 बार हल्के गरम दूध से लें। तेज गर्म दूध से न लें।

जानते हो!

-प्रतीक सोनी 'मानव'

♦हाथी अपनी सूंड में 5 लीटर तक पानी रख सकता है।
♦अफ्रीकी हाथी के मुंह में केवल चार ही दांत होते हैं।
♦व्हेल मछली उलटी दिशा में नहीं तैर सकती।
♦समुद्र में गहरा गोता लगाने के लिए मगरमच्छ कभी-कभी भारी पत्थर भी निगल लेता है।
♦शेर को भले ही जंगल का राजा कहा जाता है, लेकिन वह गेंडे और हाथी से कभी भी लड़ना नहीं चाहता।
♦टिड्डे का खून सफेद रंग का होता है।
♦कुत्ते की श्रवणशक्ति यानी सुनने की क्षमता मनुष्य से 9 गुना अधिक तेज होती है।
♦हिपोपोटोमास (दरियाई घोड़े) उन बहुत कम जानवरों में से एक हैं जो पानी में बच्चों को जन्म देते हैं।
♦ब्लू व्हेल का हृदय एक मिनट में मात्र 9 बार ही धड़कता है।
♦घोड़े खड़े-खड़े ही नींद ले लेते हैं।
♦बंदर हमेशा केला छीलकर खाते हैं। किसी भी नस्ल का बंदर छिलके सहित केला नहीं खाता।

☺ हास्यम् ☺

❒प्रतिष्ठा

☺ पुत्रः पिताजी अर्जुन कौन थे?
पिताः अरे मूर्ख, तुझे इतना भी नहीं मालूम। फिर तू स्कूल में पढ़ता ही क्या है? ला रामायण, मैं अभी तुझे बताता हूँ, कि अर्जुन कौन थे।
☺ एक महिलाः बेटी यह रास्ता किधर जाता है?
लड़कीः जी मैंने तो इसे कहीं भी जाते नहीं देखा।
☺ पिता अंकुर सेः बेटा आज स्कूल में शैतानी तो नहीं की?
अंकुरः नहीं पिताजी आज तो मैं शांति से बैंच पर खड़ा रहा।
☺ दुकानदार (नौकर से)ः ग्राहक जो भी कहे उसे सही मान लेना चाहिये, उससे बहस नहीं करनी चाहिये। वैसे तुम्हारे साथ वह झगड़ा क्यों कर रहा था?
नौकरः वह कह रहा था तुम्हारा मालिक चोर है।
☺ पिता पुत्र को गिनती सिखा रहा था इकाई के बाद दहाई, सैकड़ा, हजार, लाख, करोड़ और अरब आता है, अरब के बाद क्या आता है?
पुत्रः जी अरब के बाद ईरान आता है।
☺नरेन्द्र -(डाक्टर से) जी, मेरे दायें पैर में दर्द हो रहा है।
डाक्टर- कोई बात नहीं, उम्र के हिसाब से ऐसा होता है।
नरेन्द्र - लेकिन डाक्टर, मेरे दोनों पैरों की उम्र तो एक ही है।
☺डाक्टर (बच्चे से) क्या चोट बाजू के पास लगी है?
बच्चा- जी नहीं, स्कूल के पास।

बालवाटिका

सम्पादक : सुमेधा

प्रहेलिकाः

❖ सत्य धर्म का बोझा ढ़ोता।
जितना होता उतना कहता।
हाथ के आजू बाजू फैले,
पांव के रहते हैं दो थैले।।

❖ एक जगह पर खड़ा हुआ हूँ।
परहित पथ पर अड़ा हुआ हूँ।।

❖है स्वभाव से नटखट चंचल,
श्वेत वर्ण का निर्मल कोमल,
धावक चतुर कहलाता हूँ मैं,
बच्चों को अति भाता हूँ मैं।।

❖ एक बहादुर छोटी काया,
बोल बोल दुःख देने आया।।

❖ लकड़ी जल कोयला भई,
कोयला जल भई राख।
मैं अभागिन ऐसी जली,
कोयला हुई न राख।।

तराजू, पेड़, खरगोश, मच्छर, गैस

विचार कणिकाः

❒ईश्वरसिंह आर्य, मु०-अ०

❑ उन्नति करना चाहते हो तो प्रतिदिन आत्मनिरीक्षण अवश्य करो।
❑ त्याग से यश और अभ्यास से विद्या प्राप्त होती है।
❑ परिश्रम वह चाभी है, जो खुशहाली के सभी द्वार खोल देती है।
❑ संघर्ष नहीं तो संकल्प नहीं और और संकल्प नहीं तो समर्पण नहीं।
❑ जीवन में जितनी चुनौतियाँ होंगी उतने ही तुम बड़े हो जाओगे।
❑ वे कितने निर्धन हैं जिनके पास धैर्य नहीं।
❑ बिना अनुभव के कोरा ज्ञान अधूरा है।
❑ अंधेरे से क्यों घबराते हो, भाग्य का सूर्य तो अंधकार में ही उदय होता है।
❑ आप अपनी शक्तियों को पहचानो, संसार आपको पहचानेगा।
❑ प्रसिद्ध होने की अपेक्षा ईमानदार होना अधिक अच्छा है।
❑ एक ज्ञान के कण में हजारों अनुभवों का निचोड़ होता है।
❑ समय और सागर की लहर किसी की प्रतीक्षा नहीं करते।
❑ सम्पन्नता मित्र बनाती है, विपदा परखती है।

स्वामी दयानन्द के प्रेरक प्रसंग

बड़ा कौन ?

आर्य समाज के जन्मदाता स्वामी दयानंद सरस्वती जात-पांत के भेदभाव को मिटाने और कर्म के महत्त्व का प्रचार करने के लिये देश भ्रमण कर रहे थे। एक दिन शाम को वह रात्रि विश्राम करने के लिये एक धर्मशाला में ठहर गये। गांव के लोग साधु स्वभाव के थे कई लोग इनके पास गये और उनके प्रवचन सुनने लगे।

अंधेरा ढलने लगा तो एक आदमी भोजन लेकर आ गया। स्वामी जी ने भोजन की थाली ले ली और उस सज्जन का धन्यवाद किया। अभी वो हाथ धोकर रोटी खाने ही लगे थे कि वहां बैठे लोगों में से एक ने कहा, अरे, अरे, महाराज क्या कर रहे हैं? यह रोटी नाई की है, आप शूद्र के घर की रोटी खायेंगे?

स्वामी जी को उपदेश का अच्छा मौका हाथ लग गया। रोटी को इधर-उधर उलटाते वे कहने लगे, बंधुवर, मुझे तो रोटी पर कहीं नाई लगा दिखाई नहीं दिया रोटी तो गेहूं की नजर आ रही है।

'पर गेंहू भी तो शूद्र के घर का है।'

स्वामी जी ने हंस कर कहा- मेरे भाई मनुष्य पहले मनुष्य है, पीछे कुछ और। यह जात-पात हमने स्वार्थ के लिये बनाई है। मनुष्य कर्म से ऊंचा होता है, जाति से नहीं, यदि ब्राह्मण बुरा कर्म करता है तो वह ब्राह्मण नहीं। रविदास, कबीर, नामदेव आदि अच्छे कर्म करने से ही ऊपर हैं। सो जात-पांत को नहीं, कर्म को महत्त्व देना चाहिए। उनकी बातें सुन कर वह आदमी उनके पैरों में गिर कर कहने लगा क्षमा करे महाराज। आपने मेरी आंखें खोल दीं।

-डॉ॰ ईश्वर आर्य

चोट की डिग्री

महर्षि दयानंदजी महाराज वेद ज्ञान की निर्मल धारा बहाते हुए गुरु रामदास की नगरी अमृतसर में पधारे। ऋषिजी ने एक विज्ञापन द्वारा पंडितों को सत्य-असत्य का निर्णय करने का खुला निमंत्रण दिया। पन्थाई पीठ पीछे तो बहुत डींग मारते थे, परन्तु सामने आकर शास्त्रार्थ करने से सब घबराते व कतराते थे। बहुत यत्न से पण्डितों ने सरदार भगवानसिंह के गृह पर शास्त्रार्थ करना स्वीकार किया। दस सहस्र जनसमूह में महर्षि अटल ईश्वर-विश्वास के साथ पंडितों का सामना करने के लिए खड़े थे। यह 1878 ई0 की घटना है। कृपाराम भी दृश्य देखने आये। वे इससे पूर्व महर्षि के उपदेशामृत का पान करके वैदिक धर्म के रंग में रंग चुके थे। ऋषि दो मास तक अमृतसर में अमृतवर्षा करते रहे।

इसी भगवानसिंह के गृह पर विरोधियों ने ऋषिजी पर जमकर ईंट-पत्थरों की वर्षा की। भक्तों ने ऋषिजी के आगे-पीछे खड़े होकर महाराज को तो कोई चोट न लगने दी, परन्तु भक्तों को चोट तो आई ही। कृपाराम के पाँव में अच्छी चोट लगी। रक्त बहने लगा और जीवनभर लिए पाँव पर निशान पड़ गया। कृपाराम जी इस निशान को देखकर गर्वित होते थे। वे इसे ऋषि की मधुर स्मृति मानते थे। उनके लिए यह भी एक डिग्री थी।

भगवान से बड़ा नहीं

बात उन दिनों की है जिन दिनों स्वामी दयानन्द सरस्वती लाहौर में वैदिक धर्म का प्रचार कर रहे थे। एक दिन जब वे एक सत्संग समारोह में पहुंचे तो प्रार्थना उपासना में लीन आर्यजन श्रद्धापूर्वक उठ खड़े हुए। स्वामी जी के स्थान ग्रहण करते ही सभी पुन: बैठ गए। प्रार्थना उपासना के बाद जब स्वामी जी प्रवचन करने लगे तो उन्होंने समझाया- जब हम प्रभु उपासना में लीन हों, तब किसी भी व्यक्ति के लिए उपासना छोड़कर नहीं उठना चाहिए। मैं सर्वशक्तिमान् प्रभु से बड़ा नहीं हूँ। आपको प्रभु उपासना छोड़कर मेरा अभिनन्दन नहीं करना चाहिए। भविष्य में प्रभु स्मरण में लीन होने के समय इस प्रकार किसी के स्वागत में कभी न उठना। स्वामीजी की बात सुनकर उनके अनुयायियों ने दयानन्द के नए रूप के दर्शन किए।

-आस्था

दयानन्द अपने अन्तिम समय में, मृत्यु को आसन्न जानकर भी मुस्करा रहे थे, ऐसा क्यों हुआ? इस रहस्यमयी मुस्कान के प्रमुख तीन कारण थे-प्रथम 'परमात्मा में अटूट विश्वास द्वितीय-आत्मा का स्वरूप और उसके लक्षण का ज्ञान तथा पदार्थों का त्यागभाव से उपयोग।'

हीरा कीचड़ से निकल गया

❐डॉ. विवेक आर्य

पंजाब के जेहलम नगर में महर्षि दयानंद के प्रवचन हो रहे थे। एक सज्जन वहाँ के तहसीलदार को ले आये और ऋषि जी से निवेदन किया कि ये अच्छे कवि व संगीतज्ञ तथा मधुर गायक हैं, महर्षि ने कहा सुनाओ। इन्होंने मधुर स्वर में जो संगीतमय गीत गाया तो सारे श्रोता झूमने लगे, महर्षि भी आनंदविभोर हो गए। महर्षि के उपदेश के पश्चात् एक सज्जन ने कहा- स्वामीजी, ये जो संगीतमय गीत गा रहे थे, वे बड़े शराबी, वेश्यागामी, जुआरी, रिश्वतखोर हैं। ऐसे अनेक दोष इनमे हैं। आपने ऐसे व्यक्ति को अपनी सभा में बोलने दिया! ऋषि मुस्कुराए और कहा- कल आने दो। उन्होंने दूसरे दिवस आकर फिर सुमधुर कंठ से प्रभु महिमा में गीत गाया। सबको बड़ा आनंद आया।

महर्षि ने शराब, वेश्यागमन, जुआ, रिश्वत आदि से क्या हानि होती है, इसी पर उपदेश दिया। तहसीलदार जी अनुभव करते थे कि ये तो मेरे जीवन की डायरी सुना रहे हैं। सत्संग सम्पन्न हुआ। तहसीलदार जी ने भी आज्ञा मांगी। महर्षि ने कहा- आपका कितना मधुर कंठ है! कितने सुंदर प्रभुभक्ति के गीत गाते हो। इस नगर में तुम हीरे हो। हो तो हीरे, किन्तु कीचड़ में पड़े हो।

हृदय उपदेशामृत से निर्मल हो गया था। इन वचनों का ऐसा प्रभाव पड़ा कि घर पहुंचकर शराब की बोतलें फेंक दीं, वेश्याओं को निकाल दिया, जुआरियों को विदा किया! जीवन पलट गया।

पत्नी को बुलाया और महर्षि के पास पहुंचे। ऋषिराज! यह हीरा कीचड़ से निकलकर ऋषि चरणों में आ गया है, इसका उद्धार करें। यह कह ऋषि के चरणों में गिर पड़े। अविरल अश्रुधारा से महर्षि के पावों का प्रक्षालन कर दिया। सर्व श्रोता भी अश्रुपूरित हो गए। महर्षि ने हृदय से लगा लिया।

ये तहसीलदार मेहता अमीचंद थे, जिन्होंने महर्षि की कृपा से सत्संग में आकर अनेक प्रभुमहिमा के गीतों की रचना कर प्रचार किया ।

उदाहरण के लिए-

1- तुम हो प्रभु चाँद मैं हूँ चकोरा,
तुम हो कमलफूल मैं रस का भौंरा।।

2- जय जय पिता परम आनंद दाता,
जगदादि कारण मुक्तिप्रदाता।।

3-आज सब मिल गीत गाओ,
उस प्रभु के धन्यवाद।।

आइये जानें भारत विश्व गुरु क्यों था ?

❐अमनदीप सिंह आर्य

❍शतरंज के खेल की खोज भारत में हुई थी।

❍भारत ने अपने इतिहास में किसी भी देश पर कब्जा नहीं किया। ❍अमरिका के जेमोलोजिकल संस्थान के अनुसार 1896 तक भारत ही केवल हीरों का स्रोत था।

❍भारत 17वीं सदी तक धरती पर सबसे अमीर देश था इसलिए यह सोने की चिड़िया कहलाता था।

❍भारत में ही संख्या पद्धति का आविष्कार हुआ और आर्यभट्ट ने शून्य की खोज की।

❍नाविक विद्या की खोज 6000 ई पूर्व भारत में सिन्ध नदी में हुई थी।

❍आधुनिक विश्व का पहला विश्वविद्यालय तक्षशिला 700 बीसी में भारत में स्थापित किया गया था।

❍संस्कृत सभी भाषाओं की जननी है।

❍भास्कराचार्य ने पृथ्वी द्वारा सूर्य के ग्रह पथ का समय 365.258756484 दिन पांचवी शताब्दी में ही बता दिया था यानी न्यूटन के दादा के जन्म से पहले। ❍आयुर्वेद का जन्म भारत में हुआ। ❍अर्थशास्त्र का प्रणयन भारत में चाणक्य के द्वारा।

❍विश्व का सबसे पुराना पुस्तक 'वेद' भारत में। ❍मानव जाति का विकास भारत में। ❍सभ्यता संस्कृति का विकास भारत में।

❍विज्ञान का विकास भारत में। ❍आधुनिक वायुयान का आविष्कार शिवकरवापूजी तलपड़े ने 1895 में किया था।

❍पायथागोरस प्रमेय का सूत्र उपनिषदों में पाया गया है।

❍बैटरी निर्माण विधि का आविष्कार सर्वप्रथम महर्षि अगस्त्य ने किया था (अगस्त्य संहिता)

❍सबसे पहले व्याकरण की रचना भारत में। ❍लोकतंत्र का जन्म भारत में।

❍प्लास्टिक सर्जरी का आविष्कारक ऋषि सुश्रुत भारत में।

साभार फेसबुक

भास्कराचार्य-- महर्षि चरक--

❒डॉ० भवानी लाल भारतीय

❖भास्कराचार्य ने सुदूरवर्ती ग्रह, नक्षत्रों की गति आदि का अध्ययन स्वाविष्कृत विधियों से किया था जो सचमुच आश्चर्य का विषय है।

❖चरक संहिता विदेशी भाषाओं में अनूदित हो चुकी है। आयुर्वेद के इतिहास में महर्षि चरक को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है।

वैज्ञानिक गणितज्ञ तथा खगोल शास्त्री : भास्कराचार्य

वैज्ञानिक जगत में यह प्रसिद्ध है कि पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति का सर्वप्रथम आविष्कार अंग्रेज वैज्ञानिक सर आईजक न्यूटन ने १६६८ में किया। उन्हें यह ध्यान नहीं कि न्यूटन से लगभग पांच सौ वर्ष पूर्व भारत के महान खगोलशास्त्री भास्कराचार्य ने पृथ्वी में विद्यमान गुरुत्वाकर्षण शक्ति Theory of Gravitation की खोज की थी और अपने इस सिद्धांत का विवेचन स्वग्रंथों में किया था। महान् गणितज्ञ तथा खगोल विज्ञान के ज्ञाता भास्कराचार्य का जन्म १११४ वि० में महाराष्ट्र में हुआ था। इनके पिता का नाम महेश्वर था जो स्वयं गणित के पण्डित थे।

गुरुत्वाकर्षण के अनुसार पृथ्वी में वह शक्ति है जिसके कारण वह प्रत्येक वस्तु को अपनी ओर खींचती है। भास्कराचार्य ने इस मत का प्रतिपादन करने के साथ-साथ गणित शास्त्र के दुरूह प्रश्नों का समाधान किया। उन्होंने अपनी पुत्री लीलावती के नाम से अपने गणित विषयक ग्रंथ को प्रसिद्ध किया। ध्यान रहे कि मध्यकाल में संस्कृत में जो विज्ञान तथा भौतिक विद्याओं विषयक ग्रंथ लिखे गये वे सब पद्य शैली में, अर्थात् श्लोकात्मक लिखे गये हैं। लीलावती भी श्लोकबद्ध है जिसे स्मरण करना आसान है। इस ग्रंथ में गणित को सामान्य, रोचक विधियों से समझाया गया है। गणित के मूलभूत जोड़, बाकी, गुणा, भाग के अतिरिक्त वर्गमूल आदि प्रक्रियाओं का विवेचन इस ग्रंथ में रोचक शैली में किया गया है।

भास्कराचार्य ने खगोल विषयक दो ग्रंथ लिखे- सूर्य-सिद्धांत तथा सिद्धांत शिरोमणि। ऋषि दयानन्द ने इन्हें आर्ष ग्रंथ माना है तथा पाठ विधि में स्थान देते हुए लिखा है- दो वर्ष में ज्योतिषशास्त्र सूर्य सिद्धांत आदि जिसमें बीज गणित, अंक गणित, भूगोल, खगोल और भूगर्भ विद्या है, उसको यथावत् सीखो। इन ज्योतिष ग्रंथों में विषय विभाजन- १ लीलावती6(अंकगणित), २ बीज गणित ३ गणिताध्याय ४ गोलाध्याय के रूप में किया गया है। यद्यपि उनके काल में दूरबीन जैसे किसी उपक्रम का आविष्कार नहीं हुआ था पुनरपि भास्कराचार्य ने सुदूरवर्ती ग्रह, नक्षत्रों की गति आदि का अध्ययन स्वाविष्कृत विधियों से किया था जो सचमुच आश्चर्य का विषय है। तारामण्डल तथा आकाशगंगा (Galaxy) के रहस्यों के अध्ययन में वे जब तल्लीन हो जाते तो उन्हें भोजन विश्राम की सुधबुध नहीं रहती थी। खगोल विषयक उनका एक अन्य ग्रंथ कर्ण कुतहुल है। निश्चय ही भारतीय ज्योतिष तथा गणित के अध्ययन में भास्कराचार्य का योगदान चिर स्मरणीय है।

आयुर्वेदाचार्य महर्षि चरक

मानव शरीर को स्वस्थ, निरोग तथा दीर्घायु बनाने के लिए आयुर्वेद या आयुर्विज्ञान की जानकारी आवश्यक है। आयुर्वेद की गणना वेदों के उपवेद के रूप में की गई है और चरक, सुश्रुत, अग्निवेश आदि ऋषियों ने अपने अनुभव तथा प्रयोगों के द्वारा आयुर्वेद का विकास और विस्तार किया। प्रसिद्ध ग्रंथ चरक संहिता के प्रणेता महर्षि चरक का काल २०० ई० माना जाता है। यह कुषाणवंश के सम्राट कनिष्क के राजवैद्य थे। चरक संहिता का मूल पाठ ऋषि अग्निवेश ने निर्धारित किया था। चरक ने इसमें नये प्रकरण जोड़े। इससे इसकी उपयोगिता बढ़ी। चरक संहिता संस्कृत में लिखी गई है। हिन्दी में इसका अनुवाद उपलब्ध है। आयुर्वेद की परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में इसे स्थान मिला है।

चरक संहिता आठ भागों में विभाजित है- सूत्र स्थान, निदान स्थान, विमान स्थान, शरीर स्थान, इन्द्रिय स्थान, चिकित्सा स्थान, कल्प स्थान तथा सिद्धि स्थान। इनमें शरीर के विभिन्न अंगों की स्थिति तथा चिकित्सा में प्रयुक्त होने वाली वनस्पतियों के गुण, प्रकृति आदि का विस्तृत परिचय दिया गया है। आयुर्वेद प्रणाली के चिकित्सक न केवल अपने विषय एवं चिकित्सा पद्धति के मर्मज्ञ होते थे, वे दार्शनिक दृष्टि से रोगी में आत्मविश्वास तथा आशा भाव जगाने की योग्यता भी रखते थे। उनके इस ग्रंथ में चिकित्सा व्यवसाय में लगते समय चिकित्सक की प्रतिज्ञा का भी उल्लेख है। चरक संहिता विदेशी भाषाओं में अनूदित हो चुकी है। आयुर्वेद के इतिहास में महर्षि चरक को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है।

हाकी के जादूगर : ध्यानचन्द भारत रत्न के हकदार

❒संकलित

रिटायरमेंट के मात्र 23 वर्ष बाद ही यह देश ध्यानचंद को भूल गया।

जब पूरे देश में सचिन तेंदुलकर को भारत रत्न मिलने के बाद बहस हो रही थी कि हॉकी के जादूगर मेजर ध्यानचंद को यह सम्मान क्यों नहीं? क्या ध्यानचंद के वक्त इतना मीडिया होता, टीवी युग होता, तो यह अनदेखी मुमकिन थी? क्या था ध्यानचंद का जादू और उनका करियर? क्यों हिटलर उन्हें अपनी सेना में कर्नल बनाना चाहता था? ब्रिटेन उनसे हारने के बाद अपनी टीम को ओलंपिक में ही नहीं भेजता था और क्यों पचास की उम्र के बाद भी ध्यानचंद को न चाहते हुए भी खेलना पड़ा और आखिर में कैसे वह एम्स में कमोबेश गुमनामी की हालत में मरे--? यह सब हुआ 1926 से 1947 के दौर में।

ध्यानचंद ने किया कर्नल से वादा

पहली बार 1928 में भारतीय हॉकी टीम ओलंपिक में हिस्सा लेने ब्रिटेन पहुंचती है और 10 मार्च 1928 को एमस्टर्डम में ओलंपिक से ठीक पहले फोल्कस्टोन फेस्टिवल में, जिस ब्रिटिश साम्राज्य में सूरज डूबता नहीं था, उस देश की राष्ट्रीय टीम के खिलाफ भारत की हॉकी टीम मैदान में उतरती है और भारत ब्रिटेन की राष्ट्रीय हॉकी टीम को बुरी तरह पराजित करता है। अपने ही गुलाम देश से हार की कसमसाहट ऐसी होती है कि ओलंपिक में ब्रिटेन खेलने से इंकार कर देता है। हर किसी का ध्यान ध्यानचंद पर जाता है, जो महज 16 बरस की उम्र में सेना में शामिल होने के बाद रेजिमेंट और फिर भारतीय सेना की हॉकी टीम में चुना जाता है और सिर्फ21 बरस की उम्र में यानी 1926 में न्यूजीलैड जाने वाली टीम में शरीक होता है और जब हॉकी टीम न्यूजीलैंड से लौटती है तो ब्रिटिश सैनिक अधिकारी ध्यानचंद का ओहदा बढ़ाते हुये उसे लांस-नायक बना देते हैं। न्यूजीलैंड में ध्यानचंद की स्टिक कुछ ऐसी चलती है कि भारत 21 में से 18 मैच जीतता है, 2 मैच ड्रा होते हैं और एक में हार मिलती है। हॉकी टीम के भारत लौटने पर जब कर्नल जार्ज ध्यानचंद से पूछते हैं कि भारत की टीम एक मैच क्यों हार गयी तो ध्यानचंद का जबाब था कि उन्हें लगा कि उनके पीछे बाकी 10 खिलाड़ी भी हैं। अगला सवाल- तो आगे क्या होगा? जवाब आता है कि किसी से हारेंगे नहीं। इस प्रदर्शन और जवाब के बाद ध्यानचंद लांस नायक बना दिए गए।

हिटलर के सामने भारत का ध्यानचंद

बर्लिन ओलंपिक एक ऐसे जादूगर का इंतजार कर रहा है, जिसने सिर्फ 21 बरस में दिये गये वादे को ना सिर्फ निभाया, बल्कि मैदान में जब भी उतरा अपनी टीम को हारने नहीं दिया। चाहे एमस्टर्डम में 1928 का ओलंपिक हो या सैन फ्रांसिस्को में 1932 का ओलंपिक। और अब 1936 में क्या होगा जब हिटलर के सामने भारत खेलेगा? क्या जर्मनी की टीम के सामने हिटलर की मौजूदगी में ध्यानचंद की जादूगरी चलेगी? जैसे-जैसे बर्लिन ओलंपिक की तारीख करीब आ रही है वैसे-वैसे जर्मनी के अखबारों में ध्यानचंद के किस्से किसी सितारे की तरह यह कहकर चमकने लगे हैं कि 'चांद' का खेल देखने के लिए पूरा जर्मनी बेताब है। 1928 का ओलंपिक, आस्ट्रिया को 6-0, बेल्जियम को 9-0, डेनमार्क को 5-0, स्वीटजरलैंड को 6-0 और नीदरलैंड को 3-0 से हराकर भारत ने गोल्ड मेडल जीता तो

समूची ब्रिटिश मीडिया ने लिखा कि यह हॉकी का खेल नहीं, जादू था और ध्यानचंद यकीनन हॉकी के जादूगर हैं। लेकिन बर्लिन ओलंपिक का इंतजार कर रहे हिटलर की नज़र 1928 के ओलंपिक से पहले प्रि ओलपिंक में डच बेल्जियम के साथ जर्मनी की हार पर थी। जर्मनी के अखबार 1936 में लगातार यह छाप रहे थे जिस ध्यानचंद ने कभी भी जर्मनी टीम को मैदान पर बख्शा नहीं चाहे वह 1928 का ओलंपिक हो या 1932 का, तो फिर 1936 में क्या होगा? क्योंकि हिटलर तो जीतने का नाम है। तो क्या बर्लिन ओलपिंक पहली बार हिटलर की मौजूदगी में जर्मनी की हार का गवाह बनेगा? इधर मुंबई में बर्लिन जाने के लिये तैयार हुई भारतीय टीम में भी हिटलर को लेकर किस्से चल पड़े थे। पत्रकार टीम के कप्तान और मैनेजर से लगातार सवाल कर रहे थे इस खास मुकाबले के बारे में।

24 घंटे के लिए रोक दिया गया ट्रैफिक

1928 में जब ओलपिंक में गोल्ड लेकर भारतीय हॉकी टीम बंबई पहुंची थी तो पेशावर से लेकर केरल तक से लोग विजेता टीम के एक दर्शन करने और ध्यानचंद को देखने भर के लिये पहुंचे थे, उस दिन बंबई के डाकयार्ड पर मालवाहक जहाजों को समुद्र में ही रोक दिया गया था। जहाजों की आवाजाही भी 24 घंटे नहीं हो पायी थी क्योंकि ध्यानचंद की एक झलक पाने के लिये हजारों हजार लोग बंबई हारबर में जुटे थे।

ओलंपिक खेल कर लौटे ध्यानचंद का तबादला 1928 में नार्थ-वेस्ट फ्रंटियर प्रोविंस वजीरिस्तान (फिलहाल पाकिस्तान) में कर दिया गया, जहाँ हाकी खेलना मुश्किल था। पहाड़ी इलाका था, मैदान था नहीं, लेकिन ओलंपिक में सबसे ज्यादा गोल (5 मैच में 14 गोल) करने वाले ध्यानचंद का नाम 1932 में सबसे पहले ओलंपिक टीम के खिलाडियों में यह कहकर लिखा गया कि सेंट फ्रांसिस्को ओलंपिक से पहले प्रैक्टिस मैच के लिये टीम को सिलोन यानी मौजूदा वक्त में श्रीलंका भेज दिया जाए। दो प्रैक्टिस मैच में भारत की ओलंपिक टीम ने सिलोन को 20-0 और 10-0 से हराया। ध्यानचंद ने अकेले डेढ दर्जन गोल ठोंके। उसके बाद 30 जुलाई 1932 में शुरु होने वाले लास-एंजेल्स ओलंपिक के लिये भारत की टीम 30 मई को मुंबई से रवाना हुई।

फाइनल में अमेरिका के खिलाफदो दर्जन गोल

लगातार 17 दिन के सफर के बाद 4 अगस्त 1932 को अपने पहले मैच में भारत की टीम ने जापान को 11-1 से हराया। ध्यानचंद ने 3 गोल किए। फाइनल में मेजबान देश अमेरिका से भारत का सामना था और माना जा रहा था कि मेजबान देश को मैच में अपने दर्शकों का लाभ मिलेगा। लेकिन फाइनल में भारत ने अमेरिकी टीम के खिलाफ दो दर्जन गोल ठोंके। जी हाँ, भारत ने अमेरिका को 24-1 से हराया। इस मैच में ध्यानचंद ने 8 गोल किए। लेकिन पहली बार ध्यानचंद को गोल ठोंकने में अपने भाई रूप सिंह से यहाँ मात मिली, क्योंकि रूप ने 10 गोल ठोंके।

दिग्विजय

1936 में बर्लिन ओलंपिक को लेकर जर्मनी के अखबारों में यही सवाल बड़ा था कि जर्मनी मेजबानी करते हुए भारत से हार जाएगा या फिर बुरी तरह हारेगा और ध्यानचंद का जादू चल गया तो क्या होगा? क्योंकि 1932 के ओलंपिक में भारत ने कुल 35 गोल ठोंके थे और खाए महज 2 गोल। और तो और ध्यानचंद और उनके भाई रुपचंद ने 35 में से 25 गोल ठोंके थे। बर्लिन ओलंपिक का वक्त जैसे जैसे नजदीक आ रहा था, वैसे वैसे जर्मनी में ध्यानचंद को लेकर जितने सवाल लगातार अखबारों की सुर्खियों में चल रहे थे उसमें पहली बार लग कुछ ऐसा रहा था जैसे हिटलर के खिलाफ भारत को खेलना है और जर्मनी हार देखने को तैयार नहीं है। ध्यानचंद को हॉकी को जादू के तौर पर लगातार देखा जा रहा था और 1932 के ओलंपिक के बाद और 1936 के बर्लिन ओलंपिक से पहले यानी इन चार बरस के दौरान भारत ने 37 अंतरराष्ट्रीय मैच खेले जिसमें 34 भारत ने जीते, 2 ड्रा हुये और 2 रद्द हो गये। यानी भारत एक मैच भी नहीं हारा। इस दौर में भारत ने 338 गोल किये जिसमें अकेले ध्यानचंद ने 133 गोल किए। बर्लिन ओलंपिक से पहले ध्यानचंद के हॉकी के सफर का लेखा-जोखा कुछ इस तरह जर्मनी में छाने लगा कि हिटलर की तानाशाही भी ध्यानचंद की जादूगरी में छुप गई।

प्रैक्टिस मैच में जर्मनी को पटखनी

बर्लिन ओलंपिक की शान ही यह थी कि किसी मेले की तरह ओलंपिक की तैयारी जर्मनी ने की थी। ओलंपिक ग्राउंड में ही मनोरंजन के साधन भी थे और दर्शकों की आवाजाही भी जबरदस्त थी। ओलंपिक शुरु होने से 13 दिन पहले 17 जुलाई 1936 को जर्मनी के साथ प्रैक्टिस मैच भारत को खेलना था। 17 दिन के सफर के बाद पहुंची टीम थकी हुई थी। बावजूद इसके भारत ने जर्मनी को 4-1 से हराया और उसके बाद ओलंपिक में बिना गोल खाए हर देश को बिल्कुल रौंदते हुए भारत आगे

बढ़ रहा था और जर्मनी के अखबारों में छप रहा था कि हॉकी नहीं जादू देखने पहुंचें, क्योंकि हॉकी का जादूगर ध्यानचंद पूरी तरह एक्टिव है। भारत ने पहले मैच में हंगरी को 4-0, फिर अमेरिका को 7-0, जापान को 9-0, सेमीफाइनल में फ्रांस को 10-0 से हराया और बिना गोल खाए हर किसी को हराकर फाइनल में पहुंचा। यहाँ सामने थी हिटलर की टीम यानी जर्मनी की टीम। फाइनल का दिन था 15 अगस्त 1936। भारतीय टीम ने खाई तिरंगे की कसम, नहीं डरेंगे हिटलर से!

भारतीय टीम में खलबली थी कि फाइनल देखने एडोल्फ हिटलर भी आ रहे थे और मैदान में हिटलर की मौजूदगी से ही भारतीय टीम सहमी हुई थी। ड्रेसिंग रुम में सहमी टीम के सामने टीम के मैनेजर पंकज गुप्ता ने गुलाम भारत में आजादी का संघर्ष करते कांग्रेस के तिरंगे को अपने बैग से निकाला और ध्यानचंद समेत हर खिलाड़ी को उस वक्त तिंरगे की कसम खिलाई कि हिटलर की मौजूदगी में घबराना नहीं है। यह कल्पना के परे था। उस वक्त भारतीय हॉकी टीम ने तिरंगे को दिल में लहराया और जर्मनी की टीम के खिलाफ मैदान में उतरी। हिटलर स्टेडियम में ही मौजूद था।

हाफटाइम के बाद ध्यानचंद ने उतारे जूते

टीम ने खेलना शुरु किया और गोलों का सिलसिला भी फौरन शुरू हो गया। हाफटाइम तक भारत 2 गोल ठोंक चुका था। 14 अगस्त को बारिश हुई थी तो मैदान गीला था और बिना स्पाइक वाले रबड़ के जूते लगातार फिसल रहे थे। ध्यानचंद ने हाफटाइम के बाद जूते उतार कर नंगे पांव ही खेलना शुरु किया। जर्मनी को हारता देख हिटलर मैदान छोड़ जा चुका था। उधर नंगे पांव खेलते ध्यानचंद ने हाफ टाइम के बाद गोल दागने की रफ्तार बढ़ा दी थी। इस मैच में भारत ने 8-1 से जर्मनी को हराया।

हिटलर से भेंट

फाइनल के अगले दिन यानी 16 अगस्त को ऐलान हुआ कि विजेता भारतीय टीम को मेडल पहनाएंगे हिटलर। इस खबर को सुनकर ध्यानचंद रात भर नहीं सो पाए। भारत में जैसे ही यह खबर पहुँची, यहाँ के अखबार हिटलर के अजीबोगरीब फैसलों के बारे में छाप कर आशंका प्रकट करने लगे। बहरहाल, अगले दिन हिटलर आए और उन्होंने ध्यानचंद की पीठ ठोंकी। उनकी नजर ध्यानचंद के अंगूठे के पास फटे जूतों पर टिक गई। ध्यानचंद से सवाल जवाब शुरू हुए। जब हिटलर को पता चला कि ध्यानचंद ब्रिटिश इंडियन आर्मी की पंजाब रेजिमेंट में लांस नायक जैसे छोटे ओहदे पर है, तो उसने ऑफर किया कि जर्मनी में रुक जाओ, सेना में कर्नल बना दूंगा। ध्यानचंद ने कहा- नहीं, पंजाब रेजिमेंट पर मुझे गर्व है और भारत ही मेरा देश है। हिटलर ध्यानचंद को मेडल पहनाकर स्टेडियम से चले गए, ध्यानचंद की सांस में सांस आई।

खेलते रहे पचास के पार तक

बर्लिन से जब हाकी टीम लौटी तो ध्यानचंद को देखने और छूने के लिये पूरे देश में जुनून सा था। रेजिमेंट में भी ध्यानचंद जीवित किस्सा बन गए। उन्हें 1937 में लेफ्टिनेंट का दर्जा दिया गया। सेना में वे लगातार काम करते रहे और जब 1945 में दूसरा विश्व युद्ध खत्म हुआ तो ध्यानचंद की उम्र हो चुकी थी 40 साल। उन्होंने कहा कि अब नए लड़कों को आगे आना चाहिए और मुझे रिटायरमेंट लेना चाहिए। मगर देश का उन पर ऐसा न करने का दबाव था और 1926 में अपने कर्नल से कभी न हारने का जो वादा उन्होंने किया था, उसे 1947 तक बेधड़क निभाते रहे।

और देश उन्हें भूल गया

51 बरस की उम्र में 1956 में आखिरकार ध्यानचंद रिटायर हुये तो सरकार ने पद्मविभूषण से उन्हें सम्मानित किया और रिटायरमेंट के महज 23 बरस बाद ही यह देश ध्यानचंद को भूल गया। इलाज की तंगी से जूझते ध्यानचंद की मौत 3 दिसंबर 1979 को दिल्ली के एम्स में हुई। उनकी मौत पर देश या सरकार नहीं, बल्कि पंजाब रेजिमेंट के जवान निकल कर आए, जिसमें काम करते हुये ध्यानचंद ने उम्र गुजार दी थी और उस वक्त हिटलर के सामने पंजाब रेजिमेंट पर गर्व किया था जब हिटलर के सामने समूचा विश्व कुछ बोलने की ताकत नहीं रखता था। पंजाब रेजिमेंट ने सेना के सम्मान के साथ ध्यानचंद को आखिरी विदाई थी।

मौका मिले तो झांसी में ध्यानचंद की उस आखिरी जमीन पर जरुर जाइएगा, जहाँ टीवी युग में मीडिया नहीं पहुंचा है। वहाँ अब भी दूर से ही हॉकी स्टिक के साथ ध्यानचंद दिख जाएंगे। और जैसे ही ध्यानचंद की वह मूर्ति दिखायी दे तो सोचिएगा कि अगर ध्यानचंद के वक्त टीवी युग होता और हमने ध्यानचंद को खेलते हुये देखा होता तो ध्यानचंद आज कहाँ होते! लेकिन हमने तो ध्यानचंद को खेलते हुए देखा ही नहीं!

(यह लेख इंटरनेट से लिया गया है। खेद है कि डाउनलोड करते समय इसके लेखक का नाम अंकित नहीं किया जा सका। हम उन अज्ञात लेखक के प्रति आभार प्रकट करते हैं।-संपादक)

❐स्वामी भीष्म जी

देशवासी लाये विष उसको पिलाने के लिए।
सैंकड़ों संकट सहे जिसने जमाने के लिए।।टेक।।

हर तरह फूला फला कभी जो चमन गुलजार था।
उसके ही घर-२ में देखा उसने हाहाकार था।।
नाक थी भारत की काशी विद्या का भण्डार था।
रण्डियों का काशी में देखा भरा बाजार था।।
ढोल बज रहे ढोंग के थे लूट खाने के लिए।।१।

एक ईश्वर की जगह अनगिन बने भगवान थे।
मातपितु गुरु की जगह पर पुज रहे पाषाण थे।।
साधु और सन्तों के देखे राजसी सामान थे।
वेद में पाषाण पूजा दो दिखा ऐलान थे।।
त्यार हो गए पोप योगी को हराने के लिए।।२।।

पोप पण्डों ने सुना जब योगी का ऐलान था।
काशी का सब पोप मंडल हो गया हैरान था।।
मन्दिरों बाजार में बस मच गया तूफान था।
उधर सारा शहर काशी इधर देव महान् था।
सब चले तैयार हो लड़ने लड़ाने के लिए।।३।।

पन्द्रह बीस हजार व्यक्ति बात की ही बात में।
बाल शास्त्री और विशुद्धानन्द आदि साथ में।।
और पुजारी पोप पण्डे त्यार थे उत्पात में।
योगी से लड़ने चले थे लट्ठ ले-२ हाथ में।
और हजारों साथ थे हल्ला मचाने के लिए।।४।।

भंग सुल्फे बाज बाबा सारे फक्कड़ चल दिए।
लाल काले टीके लाकर लाल बुझक्कड़ चल दिए।।
बज रहे नरसिंघे और ले जलते लक्कड़ चल दिए।
लड़ने मरने के लिए सारे कथक्कड़ चल दिए।।
शंख घंटे ले रहे संग में बजाने के लिए।।५।।

मिलके सारे पोप मण्डल बाग में थे आ गए।
हृदय में ले द्वेष सब ऋषि के चोतरफा छा गए।।
ब्रह्मचारी का लखा जब तेज तो घबरा गए।
पर यति जी इनके मन का भेद सारा पा गए।।
क्योंकि आए वेद का डंका बजाने के लिए।।६।।

रघुनाथ कोतवाल बैठा था ऋषि के पास है।
बाग भर गया जैसे तारों से भरा आकाश है।।
जैसे तारों को छुपाता भानु का प्रकाश है।
ब्रह्म ऋषि का तेज लख हर पोप यों ही उदास है।।
साहस ना होता किसी को आगे आने के लिए।।७।।

स्वामी बोले सुन लिया होगा मेरा ऐलान है।
वेद में पाषाण पूजा का कहाँ प्रमाण है।।
जबकि है निराकार ईश्वर सर्वशक्तिमान है।
पोप मण्डल में सन्नाटा छा गया सुनसान है।।
भीष्म लग गये मुँह तभी तकने तकाने के लिये।।८।।

सेंट्रल जेल आगरा में फल वितरण व पुरुषार्थी जी का उपदेश

आर्यसमाज, नाई की मंडी आगरा द्वारा आमंत्रित आचार्य श्री आनंद पुरुषार्थी जी के साथ आर्यसमाज का एक 12 जनों का शिष्ट मंडल 6 सितम्बर को केंद्रीय कारागार पहुंचा, जिसमें 3000 कैदी रहते हैं तथा कुछ ऐसे भी हैं जिन्हें 30 वर्ष जेल में पूरे हो चुके हैं। बंदी भाईयों को आचार्य जी ने कर्मफल के बारे में बताया। आत्म-नियंत्रण, सत्संगी विद्वानों का संसर्ग, स्वाध्याय, ईश्वर उपासना व आत्म निरीक्षण- इन सभी का एक साथ अभाव व्यक्ति को पापाचार की ओर ले जाता है। आप यहाँ किसी गलती या अपराध से जेल आ गए हैं तो हमेशा के लिए उन्नति पर विराम लग गया है, ऐसा भी नहीं है। समस्त सुविधाओं से युक्त इस स्थान पर आप महात्मा गाँधी, लोकमान्य तिलक, नेताजी सुभाष चन्द्र बोस, वीर सावरकर, रामप्रसाद बिस्मिल का आदर्श उपस्थित कर सकते हैं जिन्होंने जेल में रहकर राष्ट्र, धर्म, संस्कृति के उत्थान हेतु चिंतन मनन लेखन किया। जेलर श्री रत्नाकर को वैदिक साहित्य व ऋषि दयानंद का चित्र भेंट किया गया। कैदी भाईयों को केले वितरित किये गए। आगरा के पागल खाना को देखने की आचार्य जी इच्छा से सभी वहाँ भी गए। सी बी एस सी भारती विद्या मंदिर में भी आचार्यप्रवर पुरुषार्थी जी का एक व्याख्यान रखा गया। नाई की मंडी आर्यसमाज में 7 सितम्बर को बृहत् स्तर का सत्संग रखा गया। आचार्यजी ने राष्ट्र व परिवारों के निर्माण हेतु वैदिक धर्म के प्रचार को घर घर पहुँचाने हेतु विशेष बल दिया। श्रीमती संतोष सडाना माता जी एवं परिवार की ओर से अपने स्वर्गीय पिता श्री किशनलाल जी की पुण्य तिथि के उपलक्ष्य में सभी के लिए प्रीतिभोज की व्यवस्था थी।

-अश्विनी दुबे, अनुज आर्य
संयोजक कार्यक्रम,
आर्यसमाज नाई की मंडी, आगरा (उ. प्र.)

गुरुकुल होशंगाबाद का वार्षिकोत्सव

आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय होशंगाबाद (म० प्र०) का १०३ वाँ वार्षिकोत्सव ५ से ७ दिसम्बर २०१५ तक आयोजित किया जा रहा है। इस उत्सव में देश के ख्यातनाम विद्वानों द्वारा विविध विषयों पर उपदेश व प्रवचनल होंगे तथा अध्ययनरत ब्रह्मचारी छात्रों के पाणि और वाणी के मनोहर कार्यक्रम देखने को मिलेंगे। समस्त सज्जनों से निवेदन है कि उक्त कार्यक्रम में पधारकर शोभा बढ़ावें व विद्वानों के प्रवचनों से लाभ लें।

आचार्य योगेन्द्र याज्ञिक, सचिव
आर्ष गुरुकुल समिति, होशंगाबाद-४६१००१
सम्पर्क ०७५७४ २७५७८८, मो० ९८२७५ १३०२९

ढिकौली जनपद बागपत में हुआ सप्त दिवसीय वेद प्रचार

जनपद बागपत (उ० प्र०) के ग्राम ढ़िकौली में आर्यसमाज के उत्साही युवकों ने वेद प्रचार की धूम मचा दी है। गत ५ सितम्बर से सप्त दिवसीय कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इसमें महोपदेशक महाशय श्रीपाल जी, खेड़ा हटाना, आचार्य धनकुमार जी शास्त्री, राणा रामपाल जी, निरपुड़ा सहित अनेक विद्वानों ने पधारकर ग्रामवासियों को वेदामृत पान कराया। ग्राम की ९ पट्टियों में अलग अलग स्थानों पर विशाल यज्ञ व सत्संग का आयोजन हुआ, जिसमें ग्रामवासियों ने बहुत उत्साह दिखाया। ग्राम के अत्यंत कर्मठ और समर्पित युवक विनोद आर्य जी के विशेष उत्साह और प्रयासों से कार्यक्रम अत्यंत सफल रहा।

आर्यसमाज ढ़िकौली, बागपत के तत्त्वावधान में

भव्य वेदप्रचार समारोह

६-७ दिसम्बर २०१४ (शनि-रविवार)

आमन्त्रित प्रमुख विद्वान् :- श्री स्वामी शिवानन्द जी, गाजियाबाद, आचार्य वीरेन्द्र शास्त्री जी, सहारनपुर, महाशय श्रीपाल जी आर्य महोपदेशक, खेड़ा हटाना, सहदेव समर्पित जी, जींद, महाशय रामनिवास जी आर्य प्रसिद्ध भजनोपदेशक, पानीपत (हरियाणा)

आप सादर आमन्त्रित हैं।

निवेदक : विनोद आर्य, मो० 9675815500

अथर्ववेद ब्रह्मपारायण यज्ञ सम्पन्न

जयपुर, स्थानीय गोविन्दपुरी-रामनगर में तीन दिवसीय अथर्ववेद ब्रह्मपारायण महायज्ञ की पूर्णाहुति रविवार २९ सितम्बर को हुई। डॉ० रामपाल विद्याभास्कर के ब्रह्मत्त्व में पं० भगवान सहाय विद्यावाचस्पति, डॉ० संदीपन आर्य व श्रीमती श्रुति शास्त्री ने वेद पाठ किया। आयोजन के प्रत्येक सत्र में भजनोपदेशक श्री टीकमसिंह आर्य के भजनों से मधुरता का संचार हुआ। उक्त बस्ती में आर्यसमाज की पहुंच नहीं है फिर भी निवासियों ने वैदिक कर्मकाण्ड के प्रति श्रद्धा एवं अपूर्व उत्साह दिखाया। डी० ए० वी० संस्था के पूर्व प्रोफेसर डॉ० कृष्णपाल सिंह के अथक प्रयासों से यह चौथा कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। श्री रघुनन्दन बंसल तथा राजेन्द्र आर्य ने कन्धे से कन्धा मिलाकर सहयोग किया।

संवाद : ईश्वरदयाल माथुर, सिद्धान्त भास्कर

शिवपुरी आर्यों की जन संसद ने किया वेद प्रचार हेतु नव प्रयोग

आर्यसमाज शिवपुरी (म. प्र.) के कुछ उत्साही नवयुवकों ने पब्लिक पार्लियामेंट (जन संसद) नाम से संस्था का गठन किया और इसमें अनेक स्वयंसेवी संस्थाओं के युवकों को सम्मिलित किया। 29 से 31 अगस्त 2014 तक कार्यक्रम रखा गया। वीर सावरकर विशाल उद्यान, बाल शिक्षा निकेतन स्कूल, आर एस एस के प्रसिद्ध आवासीय विद्यालय सरस्वती विद्यापीठ-- सभी जगह सैंकड़ों छात्र छात्रायें उपस्थित थे। आचार्य श्री आनंद पुरुषार्थी जी ने मोटिवेशनल सेमिनार के शीर्षक से आयोजित इन कार्यक्रमों में विभिन्न क्षेत्रों में सफलता प्राप्त करने के उपाय बताये। मानस भवन के कार्यक्रम में 'पारिवारिक सामंजस्य एवं नैतिक उत्तरदायित्व' विषय पर पाणिग्रहण संस्कार के सप्तपदी की व्याख्या करते हुए कहा कि हमारे देश में हनीमून का कोई रिवाज कभी नहीं रहा।

श्रीराम, कृष्ण, सत्यवान जैसे महापुरुष व सीता, रुक्मणी, सावित्री, मदालसा जैसी देवियाँ हुई जिन्होंने दीर्घकालीन ब्रह्मचर्य के बाद यज्ञ पूर्वक संतानें उत्पन्न कीं। पाणिग्रहण एक उत्तरदायित्व है- अब मैं एकाकी जीवन से परिवार, समाज, देश व विश्व तक अपने कार्यों को विस्तृत करूँगा। 'हम दो हमारे दो' में एक संकीर्णता है, जबकि 'पञ्च महायज्ञ' करने का अर्थ ही यह है कि सभी मेरे परिवार के सदस्य हैं। माता पिता सास श्वसुर भाई बहन अतिथि मुझे सभी का ध्यान रखना है। गौ बकरी श्वान आदि पालतू पशु व विभिन्न पक्षी भी हमारे अपने हैं, सभी की चिंता व्यवस्था मुझे ही करनी है। रविवार को आर्यसमाज के सत्संग में अनेक यजमान विराजमान हुए। उसी दिन दोपहर में जिला जेल में राष्ट्रपति पुरस्कार प्राप्त श्रद्धालु जेल अधीक्षक श्री बी0 एस0 मौर्य जी व सी बी आई के वरिष्ठ अधिकारी व 300 कैदी तथा आर्यों का बड़ा समूह उपस्थित रहे। दर्शन योग महा विद्यालय के स्नातक स्वामी शांतानंद जी की सिद्धांत विषयक पुस्तक का प्रश्न पत्र बनवा कर नगर के विद्यालयों के छात्रों की संस्कृति ज्ञान परीक्षा आयोजित की गई थी, उसके पुरस्कार रविवार को सायंकाल मध्यदेशीय अग्रवाल धर्मशाला में वितरित किये गये। प्रथम, 5100 द्वितीय 3100 व तृतीय को 2100 की राशि, प्रमाणपत्र व प्रथम को 'आर्यरत्न' उपाधि भी दी गई। इस परीक्षा में लगभग 20 मुस्लिम बच्चों ने भी भाग लिया। प्रसिद्ध सितार-वादक श्रीमती स्नेहलता सिंघल जी मुख्यातिथि थीं व अध्यक्षता श्री डॉ. मधुसूदन चौबे जी ने की। श्री राणा जी संरक्षक रहे। व्यापार संघ के अध्यक्ष श्री मुकेश त्यागी का भी संक्षिप्त वक्तव्य हुआ। अनेक महानुभाव आर्य विचारधारा से परिचित हुए व आर्य वीर दल का शिविर लगवाने का विचार किया गया। जन संसद् के कार्यकर्ताओं ने स्वयं को लोकेष्णा से दूर रखा।

उमेश शर्मा, अतुल शर्मा, प्रमोद मिश्रा
संयोजकमंडल, आर्य जन संसद्, शिवपुरी (म. प्र.)

शोक-संवेदना

श्रद्धेय आचार्य राजवीर शास्त्री दिवंगत

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट दिल्ली के अध्यक्ष व मासिक 'दयानन्द सन्देश' के अवैतनिक एवं यशस्वी सम्पादक श्रद्धेय आचार्य राजवीर शास्त्री का देहान्त २५ सितम्बर २०१४ को हो गया। वे कुछ वर्षों से रोग ग्रस्त थे। उनके देहान्त का समाचार पाकर आर्यजगत् शोक में डूब गया। वैदिक शास्त्रों के प्रौढ़ विद्वान् आचार्यवर राजवीर शास्त्री जी का जन्म सन १९३८ में फजलगढ़ जिला गाजियाबाद में श्री शिवचरणदास जी के घर में हुआ था। आपने गुरुकुल झज्जर में अध्ययन किया तथा कुछ समय वहाँ अध्यापन कार्य भी किया था। तत्पश्चात् मेरठ विश्वविद्यालय से एम० ए० (संस्कृत) व वाराणसी से प्राचीन व्याकरण की परीक्षा उत्तीर्ण करके आचार्य बने। लोकेष्णा व वित्तेष्णा से निवृत्त श्रद्धेय आचार्यवर कई वर्ष तक दिल्ली प्रशासन के अधीन संस्कृत का अध्यापन कार्य भी करते रहे। लाला दीपचन्द आर्य जी द्वारा स्थापित आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट के अध्यक्ष के रूप में सेवारत रहते हुए अनेक ग्रंथों का लेखन, संशोधन, अनुसंधान व सम्पादन आदि सुकार्य कुशलतापूर्वक करते रहे जिनमें दयानन्द वैदिक कोष, यजुर्वेद देवतार्थ सूचि, महर्षि दयानन्द वेदार्थ प्रकाश, ईश, केन, कठ उपनिषद भाष्य, योग मीमांसा, विशुद्ध मनुस्मृति, संस्कार-विधि, उपदेश मंजरी, ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका, आर्याभिविनय, पातंजल योगदर्शन भाष्यम्, षट्दर्शन पदानुक्रमणिका आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

आर्यसमाज सांताक्रूज मुम्बई एवं परोपकारिणी सभा अजमेर तथा कुछ अन्य वैदिक संस्थाओं द्वारा सम्मानित श्रद्धेय श्री पण्डित राजवीर शास्त्री जी 'सरिता' द्वारा प्रकाशित वैदिक महापुरुषों व वैदिक सिद्धान्तों विषयक आलोचनात्मक लेखों के जो सप्रमाण व सटीक उत्तर दिया करते थे वे बहुत पसन्द किये जाते थे। प्रामाणिक सृष्टि संवत् विषयक उनका विस्तृत लेख इतनी लोकप्रियता व मान्यता प्राप्त कर चुका है कि अब तक सभी वैदिक विद्वानों व पत्रिकाओं ने उसी संवत् को स्वीकार भी कर लिया है।

पूज्य आचार्य जी अत्यंत विनम्र, सत्याग्रही, सत्यान्वेषी एवं वैदिक सिद्धान्तों के मर्मज्ञ थे। उनको सश्रद्ध विदाई देते हुए मन कह रहा है-

मौत उसकी जमाना करे जिसका अफसोस,
यूँ तो सभी आते हैं बारी बारी जाने के लिए।।

आज आचार्य जी सशरीर हमारे मध्य नहीं, किन्तु हम जानते हैं- 'यशः शरीरं न विनश्यति।'

पं० इन्द्रजित् देव, यमुनानगर

ओ३म्

स्वामी श्रद्धानन्द व रामप्रसाद बिस्मिल बलिदान स्मृति

कन्या भ्रूण हत्या, अंधविश्वास व नशाखोरी के विरुद्ध

प्रान्तीय आर्य महासम्मेलन, जींद (हरयाणा)

दिनांक : १४ दिसम्बर, २०१४, प्रातः १० बजे से

स्थान : महर्षि दयानन्द पार्क, निकट महर्षि दयानन्द योग चिकित्सा आश्रम, 3705, अर्बन एस्टेट, जींद-126102

आप सभी इष्ट मित्रों व परिवार सहित सादर आमन्त्रित हैं।

संयोजक : स्वामी रामवेश, प्रधान नशाबंदी परिषद्

सम्पर्क : 01681-248638, 94161-48278

भावभीनी श्रद्धांजलि

अमर शहीद भगत सिंह जी की बहन प्रकाश कौर जी का कनाडा में निधन हो गया ...

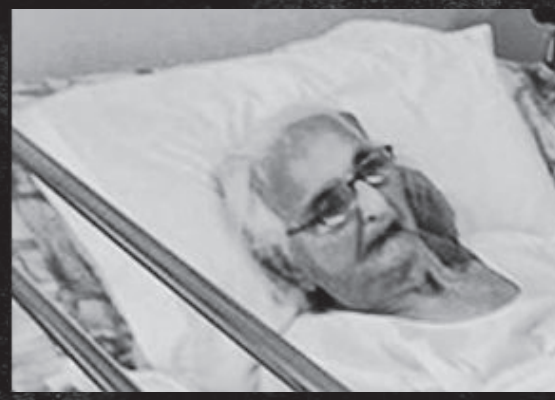

प्रकाश कौर 1920 –2014

शान्तिधर्मी परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि व शत–शत नमन

ओ३म्

M- 98968 12152

रवि स्वर्णकार

हमारे यहाँ सोने व चांदी के जेवरात आर्डर पर तैयार किये जाते हैं।

प्रो. रविन्द्र कुमार आर्य

६, आर्य समाज मंदिर, रेलवे रोड़, जीन्द (हरि०)-१२६१०३

9416545538 (मो.)

सत्यम् स्वर्णकार

हमारे यहाँ सोने व चांदी के जेवरात
आर्डर पर तैयार किये जाते हैं।

प्रो. सत्यव्रत आर्य सुपुत्र रमेश चन्द्र आर्य

नजदीक सत्यनारायण मंदिर, सुनार मार्किट,
मेन बाजार, जीन्द (हरि०)-१२६१०२

MAHARSHI DAYANAND EDUCATION INSTITUTE, BOHAL

Under the Control & Management of Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
(Establish with the Permission of Haryana Govt. vide Sr. Act XXI of 180 Govt. of India)

AN ISO 9001:2008 CERTIFIED ORGANIZATION

202, OLD HOUSING BOARD, BHIWANI-127021 (HAR)

JOB ORIENTED SELF EMOLOYED I.T.I., N.T.T. & OTHER DIPLOMA COURSI

करने व फ्रेंचाईजी लेने के लिए सम्पर्क करें।

संस्थान के सभी कोर्स आत्मनिर्भर, स्वावलम्बी बनाने व रोजगार दिलाने में सहायक हैं।
संस्थान से I.T.I. कोर्स किये अनेक विद्यार्थी सरकारी/गैर सरकारी विभागों में कार्यरत हैं।

बोहल कार्यालय सम्पर्क सूत्र :
09728004587, 09813804026
Website : www.grngo.org

सचिव : नरेश सिहाग, एडवोकेट
चैम्बर नं. १७५, जिला अदालत, भिवानी-१२७०२१ (हरि.)
09255115175, 09466532152

सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक चन्द्रभानु आर्य द्वारा अपने स्वामित्व में, ऑटोमैटिक ऑफसैट प्रैस रोहतक से छपवाकर, कार्यालय शान्तिधर्मी ७५६/३, आदर्श नगर, सुभाष चौक (पटियाला चौक), जीन्द-१२६ १०२ (हरि०) से २४-१०-२०१४ को प्रकाशित।

ऋग्वेद यजुर्वेद

हमारा संकल्प : संस्कारमय शिक्षा-उन्नत राष्ट्र

न्यू प्रगति वरि. मा. विद्यालय

डाहौला (जीन्द)

English Medium

Non Medical

नर्सरी से 12वीं तक (सह-शिक्षा)

दीपावली की शुभकामनाएँ

सम्पर्क सूत्र : 9355089158, 9991168343, 9416349775

सामवेद अथर्ववेद

पतंजलि

प्राकृतिक शुद्धता का प्रतीक

सबसे अच्छे
सबसे सस्ते

विश्वस्तरीय
गुणवत्तायुक्त
उत्पाद

पतंजलि चिकित्सालय एवं स्वदेशी केन्द्र

बूथ नं. 156, नजदीक एल.आई.सी., ऑफिस,
हुड्डा ग्राऊंड, जीन्द (हरियाणा)
मो. 9416664728, 9416238417

ओ३म्

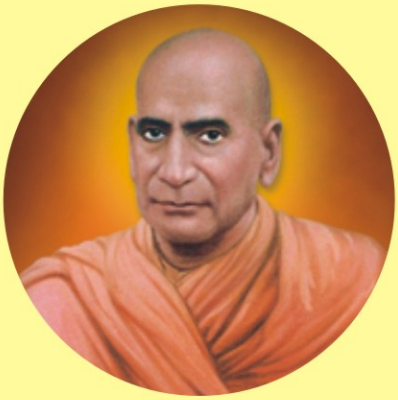

संसार को लाभ पहुंचाना ही मुझको चक्रवर्ती राज्य के तुल्य है।

–महर्षि दयानन्द

जिस व्यक्ति परिवार, समाज और राष्ट्र से सत्य उठ जाता है, वह व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र नष्ट हो जाते हैं। सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं, और असत्य से बढ़कर कोई पाप नहीं। असत्य का आश्रय लेकर पहले व्यक्ति खूब बढ़ता है। फिर उस सम्पत्ति से अनेक प्रकार के भोगों को भोगता है। उसके बाद धन की शक्ति से अपने शत्रुओं पर भी विजय प्राप्त कर लेता है, किन्तु फिर समूल नष्ट हो जाता है। वंश के वंश समाप्त हो जाते हैं। 'अन्यायोपार्जितं वित्तं दशवर्षाणि तिष्ठति' पाप और अन्याय से कमाया हुआ धन दस वर्ष ही टिकता है। कुछ इससे अधिक भी टिक जाता हो, आश्चर्य नहीं। किन्तु इसका अन्त में परिणाम कभी अच्छा नहीं निकलता। अन्त में तो 'सत्यमेव जयते नाऽनृतम्' ही सिद्ध होता है।

समस्त देशवासियों को दीपावली पर हार्दिक शुभकामनायें।

आओ एक ऐसा दीपक जलाएँ
जो अंधेरे मनों को प्रकाशित कर दे।

चौ. सुन्दरसिंह खर्ब, धर्मखेड़ी

श्याम नगर, जाट कालेज के पीछे

जींद-126102 मो. 9416514218

R.N.I. No. 70866/99 शान्तिधर्मी हिन्दी मासिक (अक्तूबर-नवम्बर, २०१४) P.R. No. : PKL 150-A/2014-16